ECPR

प्राकृत-परिचय-पाठ्यक्रम

(Elementry Course in Prakrit)

प्राकृत प्रवाह

प्रथम पाठ	०५-१२
द्वितीय पाठ	१३-४४
तृतीय पाठ	४५-५७
चतुर्थ पाठ	५८-८४
पञ्चम पाठ	८५-९१
प्रायोगिक प्रश्न (Assignments)	९२

समीक्षण

आचार्य रामजी राय

पाठ लेखन

डा. कमलेश कुमार जैन

डा. अनेकान्त जैन

डा. रजनीश शुक्ल

सम्पादन

आचार्य विजय कुमार जैन

संयोजन

डा. जयप्रकाश नारायण

सहायता

डा. सच्चिदानन्द तिवारी

डा. अजय कुमार मिश्र

प्रकाशन

प्रो. रमाकान्त पाण्डेय
निदेशक, मुक्तस्वाध्यायपीठम्
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली

प्रथम मुद्रण – 2014

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली

सर्वाधिकार सुरक्षित। नई दिल्ली स्थित राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान की लिखित अनुमति के बिना किसी भी माध्यम से इस पाठ्य सामग्री के किसी भी अंश के पुनः प्रस्तुतिकरण की अनुमति नहीं है। (प्रयुक्त कागज - Agro-based environment Friendly.)

टङ्कण

मैसर्स अमर प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली - 110 009

पृष्ठ विन्यास

राजीव कुमार सिंह
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली

पत्र-परिचय

प्रस्तुत पाठ्यक्रम पाँच पाठों में विभक्त है। इसके **प्रथम पाठ** में प्राकृत भाषा का परिचय, प्राकृत के विविध नाम, प्राकृत के प्रकार, प्राकृत एवं संस्कृत का अन्तःसम्बन्ध के अतिरिक्त प्राकृत-साहित्य का परिचय संक्षेप में बताया गया है। **द्वितीय पाठ** में विविध प्राकृतों के प्रयोग विभिन्न विधाओं में रचित पाठों के आधार पर किये गये हैं। **तृतीय पाठ** में संस्कृत नाटकों में प्रयुक्त प्राकृतों पाठ्यों का वर्णन किया गया है। **चतुर्थ पाठ** में वर्णमाला, वर्णों का स्वरूप, वर्ण-विकृति, वर्ण-परिवर्तन, स्वर-व्यंजनवर्ण-विकार एवं वर्ण-परिवर्तन के साथ संयुक्त-व्यंजन का भी परिचय दिया गया है। **पञ्चम पाठ** में अनुवाद कौशल के विवर्धन-हेतु विविध-व्याकरणांश दिये गये हैं।

पाठ के अन्त में प्रायोगिक प्रश्न (Assignments) के स्वरूप, उदाहरण तथा सहायक ग्रन्थों का निर्देश भी किया गया है।

—◆—

प्रथम पाठ (Unit-I)

1. प्राकृतभाषा और साहित्य का परिचय

पाठ-संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 प्राकृत भाषा का सामान्य-परिचय
1.4 प्राकृत का काल-क्रम विभाजन
1.5 प्राकृत का अर्थ
1.6 प्राकृत के विविध नाम
1.7 प्राकृत के प्रकार
1.8 प्राकृत एवं संस्कृत का अन्त:सम्बन्ध
1.9 प्राकृत-साहित्य का परिचय
1.9.1 अभिलेखीय प्राकृत
1.9.2 धार्मिक प्राकृत
1.9.3 साहित्यिक प्राकृत
1.9.4 नाटकीय प्राकृत
1.9.5 वैय्याकरणों द्वारा प्रयुक्त प्राकृत
बोधप्रश्न
1.10 सारांश
1.11 शब्दावली
1.12 सन्दर्भ-ग्रन्थ
1.13 सहायक-ग्रन्थ
1.14 बोधप्रश्नों के उत्तर
1.15 अभ्यास-प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्राकृत भाषा और साहित्य के इस परिचयात्मक पाठ में आपका स्वागत है। प्रस्तुत पाठ में आप प्राकृत भाषा और साहित्य का सामान्य-परिचय प्राप्त करेंगे। साथ ही विभिन्न काल-खण्डों में परिवर्तित प्राकृतों की भी जानकारी इस पाठ के माध्यम से आपको मिल सकेगी। इसी पाठ में प्राकृत- वाङ्मय का भी परिचय दिया गया है। इस पाठ के माध्यम से आप प्राकृत के स्वरूप व उत्पत्ति आदि से भी परिचित हो सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन से आपको -

- 'प्राकृत' शब्द के अर्थ की जानकारी हो सकेगी।
- 'प्राकृत' के विविधरूपों का ज्ञान हो सकेगा।
- 'प्राकृत' के विविध प्रकारों की जानकारी हो सकेगी।
- 'प्राकृत' की विशेषताओं का ज्ञान मिल सकेगा।
- 'प्राकृत' व संस्कृत के सम्बन्ध का ज्ञान हो सकेगा।

- 'प्राकृत' में रचित विविध प्रकार के साहित्य की भी जानकारी मिल सकेगी।
- प्राकृत-गाथा के उद्भव और विकास की जानकारी हो सकेगी।

1.3 प्राकृत भाषा का सामान्य-परिचय

भाषाओं में प्राकृत भाषा का महत्त्वपूर्ण-स्थान है। प्राकृत प्राचीन-भारत के सामान्यजनों और साहित्यिक जगत् की आधार-भाषा रही है। जनभाषा से विकसित होने के कारण और जन-सामान्य की स्वाभाविक (प्राकृतिक) भाषा होने के कारण इसे 'प्राकृत भाषा' कहा गया है।

प्राकृत-साहित्य में जीवन की समस्त भावनाएँ व्यंञ्जित हुई है। प्राकृतभाषा में साहित्य-रचना ई.पू. 600 से उपलब्ध होती है। भगवान् महावीर और भगवान् बुद्ध ने इसी भाषा में जनकल्याण का उपदेश दिया था। सम्राट् अशोक ने शिलालेख और स्तम्भलेखों को इसी भाषा में उत्कीर्ण कराया। खारवेल का हाथीगुंफा-शिलालेख प्राकृत में ही है। प्राकृतभाषा में ईस्वी सन् की प्रथम-द्वितीय शताब्दी तक किसी प्रकार का भेद प्राय: नहीं मिलता है। किन्तु कालान्तर में इसमें वैविध्य दिखाई पड़ता है। उस समय तीन प्रकार की प्राकृतों का स्वरूप प्राप्त है। यथा- पूर्वी प्राकृत, उत्तरपश्चिम प्राकृत और पश्चिमी प्राकृत। पूर्वी प्राकृत **मागधी** तथा उत्तरपश्चिमी प्राकृत और पश्चिमी **शौरसेनी** कहलाती है। बाद में शौरसेनी का एक शैलीगत-भेद **महाराष्ट्री** प्राकृत के नाम से अभिहित हुआ। काव्यग्रंथों की रचना सर्वत्र इसी भाषा में की गयी है। नाटकों और काव्यों की प्राकृत भाषा बोल-चाल की प्राकृत नहीं है, अपितु साहित्यिक प्राकृत है। वैयाकरणों ने प्राकृत भाषा को अनुशासित करने के लिए प्राकृत व्याकरण-ग्रंथ लिखे हैं और उन्हीं नियमों के आधार पर भाषा का रूप गठन कर रचनाएँ लिखी गयी हैं।

साहित्य निबद्ध प्राकृत भाषा को काल की दृष्टि से प्राचीनकाल, मध्यकाल और आधुनिककाल- इन तीन युगों में विभक्त किया गया है। प्राचीन प्राकृत का स्वरूप आर्षग्रन्थों, शिलालेखों एवं अश्वघोष के नाटकों में उपलब्ध होता है। मध्यकालीन प्राकृत का स्वरूप भास और कालिदास के नाटकों, गीतिकाव्यों और महाकाव्यों में तथा आधुनिक प्राकृत का स्वरूप अपभ्रंश साहित्य में पाया जाता है। सम्राट् अशोक और खारवेल के बाद वैदिक-धर्मावलम्बी आन्ध्रवंशी राजाओं ने प्राकृतभाषा के कवियों और लेखकों को केवल आश्रय ही प्रदान नहीं किया, बल्कि प्राकृत को 'राजभाषा' का पद भी प्रदान किया। आन्ध्रवंशी सातवाहन ने स्वयं ही 'गाथाकोश' का संकलन कर अपने समय की ललित और उत्तम-गाथाओं को सुरक्षित किया था।

1.4 प्राकृत का काल-क्रम-विभाजन

भाषावैज्ञानिक प्राकृत का काल मध्यकालीन आर्य-भाषा-काल (अर्थात् ई. पू. 500 से 1000 ई. तक) निर्धारण करते हैं। कुछ विद्वान् ई. पू. 600 से इसका प्रारम्भ तथा 1100 या 1200 ई. तक स्वीकार करते हैं। इसलिए मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा काल को **प्राकृत-काल** भी कहा जाता है। यह काल तीन भागों में बाँटा जाता है-

प्रथम प्राकृत-काल, द्वितीय प्राकृत-काल तथा तृतीय प्राकृत-काल। प्रथम प्राकृत-काल प्रारम्भ से अर्थात् ई. पू. 500 से ई. सन् के आरम्भ तक माना जाता है। इसमें प्राकृत-आगमों पालि-तिपिटकों तथा शिलालेखी प्राकृत को लिया गया है।

दूसरा काल ई. सन् से 500 ई. तक का माना जाता है। इसमें प्रवृत्त भाषा **प्राकृत** के नाम से अभिहित है। इस प्राकृत के अन्तर्गत शौरसेनी, मागधी, महाराष्ट्री, पैशाची, चूलिका पैशाची आदि कई प्रकार की प्राकृतों का समावेश है।

तीसरे काल की अवधि 500 ई. से 1000 ई. तक मानी जाती है। इस भाषा का नाम अपभ्रंश है, जो प्राकृत का ही उत्तरवर्ती विकास था।

1.5 प्राकृत का अर्थ

नमिसाधु के अनुसार 'प्राकृत' शब्द का अर्थ है- 'व्याकरण आदि संस्कारों से रहित लोगों का स्वाभाविक वचन-व्यापार।' उससे उत्पन्न अथवा वही वचन-व्यापार 'प्राकृत' हैं। प्राक्-कृत-इन दो पदों से 'प्राकृत' शब्द बना है, जिसका अर्थ है 'पहले किया गया।' 'प्राक्' यानि पहले तथा 'कृत' यानि किया गया। 'प्राकृत' शब्द की व्युत्पत्ति है **'प्रकृत्या स्वभावेन सिद्धं प्राकृतम्'** अथवा **'प्रकृतीनां साधारणजनानामिदं प्राकृतम्'** अर्थात् जन-सामान्य की स्वाभाविक भाषा प्राकृत है।

1.6 प्राकृत के विविध नाम

प्राकृत के लिए **पाइय, पाइअए, पाइय, पाउय, पागड, पागत, पागय, पायअ, पागय, पायड** जैसे अनेक नाम प्राप्त होते हैं। जैन अंग-साहित्य में **पागत** शब्द भी मिलता है। 'विशेषावश्यक भाष्य' की टीका में आचार्य हेमचन्द्र ने **पागय** शब्द का प्रयोग किया है। राजशेखर के 'कर्पूरमंजरी' सट्टक में **पाउअ** आया है। वाक्पतिराज कृत 'गउडवहो' प्राकृत-काव्य में 'प्राकृत' के लिए **पायय** शब्द का प्रयोग मिलता है। उपरोक्त सभी नाम 'प्राकृत' के अर्थ में प्रयुक्त हैं। आचार्य भरत ने 'नाट्यशास्त्र' में इसे 'प्राकृत' के नाम से अभिहित किया है।

1.7 प्राकृत के प्रकार

ईसा की प्रथम शताब्दी में प्राकृत जीवित-भाषा थी। भिन्न-भिन्न प्रदेशों में बोले जाने के कारण स्वभावतः उसके रूपों में भिन्नता आई। उन बोलचाल की भाषाओं या बोलियों के आधार पर विविध प्राकृतें विकसित हुई। प्रादेशिक या भौगोलिक आधार पर प्राकृतों के कई भेद हुए। उनके नाम प्रदेश-विशेष के आधार पर रखे गये। आचार्य भरत ने 'नाट्यशास्त्र' में प्राकृतों का वर्णन करते हुए मागधी, अवन्तिजा, प्राच्या, सूरसेनी, अर्धमागधी, वाह्लीका और दाक्षिणात्या नाम से प्राकृत के सात भेदों की चर्चा की है। **वररुचि** ने महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी और पैशाची आदि भेदों का उल्लेख किया है। **दण्डी** ने काव्यादर्श में महाराष्ट्री, शौरसेनी, गौड़ी और लाटी- इन चार प्राकृतों का उल्लेख किया है।

1.8 प्राकृत एवं संस्कृत का अन्तःसम्बन्ध

संस्कृत और प्राकृत भाषा के बीच भावात्मक अन्तर नहीं है। दोनों के विकास का स्रोत एक ही है, और वह है 'छान्दस्'। डॉ. एलफ्रेड, डॉ. पिशेल, डॉ. पी. डी. गुणे आदि विद्वान् भी प्राकृतभाषा के स्रोत के रूप में एक प्राचीन लोकभाषा को स्वीकार करते हैं, जिससे छन्दस् भाषा (संस्कृत) का भी विकास हुआ है। किसी भी भाषा के दो रूप होते हैं- कथ्य और साहित्य-निबद्ध। कथ्य भाषा सर्वदा परिवर्तनशील होती है। कोई भी भाषा जब साहित्य और व्याकरण के नियमों से बंध जाती है, तो उसका विकास रुक जाता है। पुनः जनभाषा से एक नयी भाषा उभरकर आती है, जो आगे साहित्य और जनमानस में सम्प्रेषण का माध्यम बनती है। यही स्थिति संस्कृत एवं प्राकृतभाषा के साथ भी हुई है।

प्राकृत ने संस्कृत के अनेक शब्दों, ध्वनिरूपों एवं काव्य रूपों को ग्रहण कर अपना साहित्य विकसित किया है, उसी प्रकार संस्कृत भाषा भी समय-समय पर प्राकृत से प्रभावित होती रही है। बोलचाल की भाषा अथवा कथ्यभाषा प्राकृत का वैदिकभाषा के साथ जो सम्बन्ध था, उसी के आधार पर साहित्यिक प्राकृतभाषा का स्वरूप निर्मित हुआ है। प्रसिद्ध

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

भाषाविद् वाकरनाल ने कहा है कि 'प्राकृतों का अस्तित्त्व निश्चित रूप से वैदिक बोलियों के साथ-साथ विद्यमान था, इन्हीं प्राकृतों से परवर्ती साहित्यिक प्राकृतों का विकास हुआ है।

प्राकृतभाषा अपने जन्म से ही जनसामान्य से जुड़ी हुई है। ध्वन्यात्मक और व्याकरणात्मक सरलीकरण की प्रवृत्ति के कारण प्राकृतभाषा लम्बे समय तक जनसामान्य के बोलचाल की भाषा रही है। जिस प्रकार वैदिकभाषा को आर्यसंस्कृति की भाषा होने का गौरव प्राप्त है, उसी प्रकार प्राकृतभाषा को आगमभाषा/आर्य भाषा होने की प्रतिष्ठा प्राप्त है।

प्राकृत और संस्कृत भाषाओं के अन्त:सम्बन्ध को हम निम्नलिखित बिन्दुओं से समझ सकते हैं–

(क) दोनों के वर्तमान साहित्यिक स्वरूप का मूल-उत्स 'छन्दस् भाषा' है।

(ख) दोनों भाषाओं का लोकरूप भी था, जो सम्प्रति इदमित्थं रूप से ज्ञात नहीं है।

(ग) दोनों के साहित्य परस्पर आदान-प्रदान की परम्परा से संवलित है।

(घ) दोनों के साहित्यों में कतिपय उद्धरणों के अतिरिक्त पारस्परिक औदार्य एवं गुणग्रहण के प्रभूत प्रमाण उपलब्ध हैं।

(ङ) दोनों भाषाओं का महत्त्व चिरकाल से अद्यावधि पर्यन्त लोकजीवन के प्रयोगों में व्याप्त है। इसका मौलिक महत्त्व अपने विशिष्ट क्षेत्रों में योगदान के कारण रहा है।

(च) भारतीय संस्कृति एवं साहित्य को तुरन्त एवं गतिशील बनाने में दोनों भाषाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ रहीं हैं।

(छ) धार्मिक साहित्य में भी बिना किसी सम्प्रदाय भेद के ईसोत्तरकाल में, विशेषत: व्याख्या-साहित्य में एवं तत्तद् दर्शन के न्याय व दर्शन विषयक साहित्य में पारस्परिक भाषिक औदार्य के प्रयोग उपलब्ध होते हैं।

1.9 प्राकृत-साहित्य का परिचय

प्राकृत-साहित्य को मूलत: पाँच वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

1. अभिलेखीय प्राकृत
2. आगमिक प्राकृत
3. साहित्यिक प्राकृत
4. नाटकीय प्राकृत
5. वैयाकरणों द्वारा प्रयुक्त प्राकृत

1.9.1 अभिलेखीय प्राकृत

किसी भी साहित्य का व्यवस्थित अध्ययन करने के लिए शिलालेख सर्वोत्तम साधन है। भारतवर्ष में सबसे प्राचीन शिलालेख सम्राट् अशोक के हैं। अपने राज्याभिषेक के 12 वर्ष पश्चात् उसने गिरनार, कालसी, धौलि, जौगड़, मानसेहरा, शाहबाजगढी, येर्रगुडी और सोपारा में शिलालेख स्थापित किये, जो आज भी मिलते हैं। इनकी भाषा 'प्राकृत' तथा लिपि 'धम्म-लिपि (ब्राह्मी)' और 'खरोष्ठी' है। इन शिलालेखों में सामान्य जन के हितार्थ, लोकोपकारी बातों को लिखवाया गया। अशोक ने छोटे-छोटे वाक्यों में अनेक जीवन-मूल्य परक बातें लिखवायीं। यथा-

प्राणानं साधु अनारंभो, अपव्यया अपभांडता साधु । (तृतीय शिलालेख)

अर्थात् प्राणियों का अनावश्यक संग्रह न करना तथा धन का थोड़ा खर्च और थोड़ा संग्रह अच्छा है।

सवपासंडा बहुसुता व असु, कल्लाणागमा च असु । (द्वादश शिलालेख)

अर्थात् सभी धार्मिक सम्प्रदाय (एक-दूसरे को) सुनने वाले हों और कल्याणकारी कार्य करने वाले हों।

सम्राट् अशोक के अलावा खारवेल एवं अन्य आन्ध्रवंशीय राजाओं ने भी प्राकृत में अनेक शिलालेख लिखवाये हैं। सम्राट खारवेल के हाथीगुम्फा-अभिलेख में राजा ने अपने 13 वर्ष के शासनकाल का वर्णन किया है। साथ ही प्राचीन भारतवर्ष का ऐतिहासिक प्रमाण भी इसी शिलालेख में प्राप्त होता है।

1.9.2 आगमिक प्राकृत

ईसापूर्व छठी शताब्दी में जनसामान्य द्वारा बोली जाने वाली बोली 'मागधी' या 'अर्धमागधी' कहलाती थी। इसी बोली में भगवान् महावीर के उपदेश संगृहीत है। महावीर की वाणी को उनके गणधरों ने द्वादशांग वाणी के रूप में निबद्ध किया है। इस द्वादशांग-वाणी में 45 ग्रंथ हैं; जिनमें 11अंग, 12 उपांग, 6 आवश्यक, 4 मूलसूत्र, 2 छेद सूत्र तथा 10 प्रकीर्णक ग्रंथ हैं। दिगम्बर-परम्परा के आगम-ग्रंथ अलग हैं। उनके आगमों की भाषा शौरसेनी प्राकृत है। इसमें आचार्य धरसेन के शिष्य आचार्य पुष्पदंत व भूतबलि-प्रणीत 'छक्खंडागमसुत्तं' (षट्खण्डागमसूत्र), आचार्य गुणधरप्रणीत 'पेज्जदोसपाहुडं' (कषायप्राभृतम्) कुन्दकुन्द की रचनाएँ समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय आदि ग्रंथ है। इसके अतिरिक्त अनेक आचार्यों ने इन आगम-ग्रंथों पर अनेक व्याख्या-साहित्य की रचना की। वर्तमान में जिसे भाष्य, चूर्णि और निर्युक्तियों के नाम से जाना जाता है, उनकी भी भाषा प्राकृत और संस्कृत है।

1.9.3 साहित्यिक प्राकृत

ईसवी सन् की प्रथम शताब्दी से लेकर 17वीं शताब्दी तक विविध प्राकृतों में कथासाहित्य, चरितसाहित्य, स्तोत्रसाहित्य, काव्यसाहित्य तथा नाटकसाहित्य का विकास हुआ है। इसमें बहुतायत से महाराष्ट्री प्राकृत का प्रयोग कथाओं और काव्यों में हुआ है। प्राकृत के नाटकों में पात्रानुसार शौरसेनी, मागधी, शाकारी, चाण्डाली और पैशाची आदि प्राकृतों का प्रयोग हुआ है।

प्राकृत-कथाग्रन्थों में प्रमुखरूप से आगमों में आगत रूपक दृष्टान्त आदि के रूप में आगत कथाओं के अतिरिक्त स्वतंत्ररूप से **तरंगवती, वसुदेवहिंडी, समराइच्चकहा, कुवलयमाला, कहारयणकोष, आख्यानमणिकोश** आदि एक सहस्र से भी अधिक प्राकृत कथाएं गद्य और पद्य में प्राप्त होती हैं। प्राकृत-काव्यों में महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तककाव्य, गीतिकाव्य तथा स्तोत्र साहित्य भी प्राप्त होता हैं। इनकी भाषा मुख्यतः महाराष्ट्री प्राकृत ही है। प्राकृत के प्रमुख काव्य-ग्रंथों में **सेतुबंध, गउडवहो, पउमचरियं, गाथासप्तशती, वज्जालग्गं, गाहासाहस्री, लीलावती, कंसवहो** आदि काव्य-ग्रन्थ हैं।

1.9.4 नाटकीय प्राकृत

प्राकृतभाषा का प्रथम नाट्यशास्त्रीय प्रयोग प्राचीन संस्कृत-नाटकों में प्राप्त होता है। भरत मुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में भिन्न-भिन्न पात्रों के लिए भिन्न-भिन्न प्राकृत-भाषाओं के बोले जाने का उल्लेख किया हैं। यथा- मागधी, आवन्तिजा, प्राच्या, शौरसेनी,

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

अर्धमागधी, बाह्लीका और दाक्षिणात्या नाम की सात प्राकृत भाषाएँ बतायी गयी हैं। संस्कृत नाटकों में अश्वघोषकृत **शारिपुत्रप्रकरण** में प्राचीन प्राकृत का प्रयोग ही मिलता है, अशोक के शिलालेखों में इन्हीं प्राकृतों का प्रयोग हुआ है। भास के सभी नाटकों में प्राकृत का प्रयोग हुआ है, उनमें शौरसेनी एवं मागधीप्राकृतों का प्रयोग प्रमुखरूप से प्राप्त होता है। कालिदास के नाटक अभिज्ञानशाकुन्तलम्, मालविकाग्निमित्रम् एवं विक्रमोर्वशीयम् के गद्य में **शौरसेनी** प्राकृत का तथा पद्य में **महाराष्ट्री** प्राकृत का प्रयोग हुआ है। पृथ्वीधर के अनुसार शूद्रक कृत **मृच्छकटिकम्** में सात प्रकार की प्राकृतों का प्रयोग मिलता है। भवभूति के नाटकों में शौरसेनी, महाराष्ट्री और मागधी प्राकृतों का प्रयोग मिलता है।

1.9.5 वैयाकरणों द्वारा प्रयुक्त प्राकृत

प्राकृत के प्रमुख व्याकरण ग्रन्थ **प्राकृतलक्षण-(चण्ड), प्राकृतप्रकाश-(वररुचि), सिद्धहेमशब्दानुशासन-(आचार्य हेमचन्द्र), प्राकृतानुशासन-(पुरुषोत्तम), प्राकृतशब्दानु-शासन-(त्रिविक्रम), संक्षिप्तसार-(क्रमदीश्वर), प्राकृतसर्वस्व-(मार्कण्डेय)** आदि उपलब्ध होते हैं। प्राकृत के वैयाकरणों ने मुख्यरूप से शौरसेनी, मागधी, महाराष्ट्री और पैशाची सहित अनेक प्राकृत-प्रयोगों का विशेषरूप से नियमन किया है।

बोध-प्रश्न

1. मुख्यरूप से प्राकृत कितने प्रकार के हैं?
2. आगमग्रन्थ कौन-कौन से हैं?
3. साहित्यिक प्राकृत के कितने प्रकार हैं?
4. अभिलेखीय प्राकृत क्या है?
5. प्राकृत के प्रमुख व्याकरण-ग्रन्थ कौन-कौन से हैं?

1.10 सारांश

भारत की प्राचीन भाषाएं संस्कृत व प्राकृत हैं। ये दोनों आर्यभाषा-परिवार की भाषाएँ हैं। दोनों का एक ही स्रोत से समानान्तर रूप से भारत की धरती पर विकास हुआ, इसलिए दोनों में विषमता के साथ-साथ समानता भी है। प्राचीनतम जनभाषा से वैदिक छान्दस् का तथा उसी से लौकिक-संस्कृत का उद्भव हुआ। प्राकृतभाषा का उद्भव प्राचीन जनभाषा से हुआ है। अतः संस्कृत (छान्दस् व लौकिक संस्कृत) और प्राकृत –ये दोनों बहिनें हैं। प्राकृत शब्द की निरुक्ति (प्रकृतिसिद्ध या पूर्वस्थित) भी यह सिद्ध करती है कि प्राकृत संस्कृत की पूर्ववर्ती है, संस्कृत से उद्भूत नहीं। जनभाषा-प्राकृत भी साहित्यिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई और धर्म-दर्शन, काव्य, कथा, नाटक आदि में प्रचुरमात्रा में साहित्य का निर्माण हुआ है। प्राकृत में आगम-ग्रंथ, व्याख्या-साहित्य, कथा एवं चरितग्रंथ, महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तककाव्य, गीतिकाव्य, नाटक और व्याकरण आदि को प्राकृतभाषा ने समृद्ध किया है।

1.11 शब्दावली

1.	आगम	–	परम्परा से प्राप्त कथन (तीर्थंकरों का उपदेश)।
2.	प्राकृत	–	प्राक् कृतं प्राकृतम्।
3.	छान्दस्	–	वैदिक ग्रंथों में प्रयुक्त भाषा।
4.	लोकभाषा	–	संस्कार सम्पन्न लोगों की भाषा अर्थात् संस्कृत।

5. साहित्य – वह विधा, जिसमें काव्य, नाटक, धर्म, दर्शन, व्याकरण, कोष आदि समाहित हों।

6. जनभाषा – जनसाधारण में प्रयुक्त भाषा अर्थात् प्राकृत।

1.12 सन्दर्भ ग्रंथ

1. प्राकृत-साहित्य का इतिहास – डॉ. जगदीश चन्द्र जैन, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

2. प्राकृत-विमर्श – डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी।

1.13 सहायक-ग्रंथ

१. प्राकृतमार्गोपदेशिका – पं. बेचरदास जीवराज दोशी, उत्तरप्रदेश जैन संस्कृति संस्थान, लखनऊ।

2. प्राकृत स्वयंशिक्षक – प्रेम सुमन जैन, प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर।

3. प्राकृत-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास – डॉ. नेमिचन्द शास्त्री, तारा पब्लिकेशन वाराणसी।

4. प्राकृत-साहित्य की रूपरेखा- डॉ. तारा डागा, प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर।

1.14 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. मुख्यरूप से पाँच प्रकार की प्राकृत हैं-

   1. अर्धमागधी, 2. शौरसेनी, 3. महाराष्ट्री, 4. मागधी, 5. पैशाची।

2. अर्धमागधी में आगमग्रंथ 45 हैं-

   यथा- 11 अंग, 12 उपांग, 6 छेद सूत्र, 4 मूलसूत्र, 10 प्रकीर्णक और नन्दीद्वार और अनुयोगद्वार।

3. साहित्यिक प्राकृत पाँच प्रकार की हैं-

   1. अभिलेखीय प्राकृत, 2. आगमिक प्राकृत, 3. साहित्यिक प्राकृत, 4. नाटकीय प्राकृत और 5. वैयाकरणों द्वारा प्रयुक्त प्राकृत।

4. जिस प्राकृत का प्रयोग सम्राट् अशोक और खारवेल ने अपने अभिलेखों में किया है, वह अभिलेखीय प्राकृत है।

5. प्राकृत के प्रमुख व्याकरण-ग्रन्थ हैं –

   प्राकृतलक्षण, प्राकृतप्रकाश, सिद्धहेमशब्दानुशासन, प्राकृतानुशासन, प्राकृतशब्दानु- शासन, संक्षिप्तसार, और प्राकृतसर्वस्व।

1.15 अभ्यास के प्रश्न

1. प्राकृत-साहित्य के विकास पर टिप्पणी लिखें।

.....

.....

.....

.....

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

2. साहित्यिक-प्राकृत क्या है? विवरणात्मक परिचय लिखें।

.....

.....

.....

.....

3. भाषाशास्त्रीय दृष्टि से प्राकृत की समीक्षा करें।

.....

.....

.....

.....

4. प्राकृत व्याकरण ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय दें।

.....

.....

.....

.....

—◆—

द्वितीय पाठ (Unit - II)

विविध प्राकृत पाठ्य संचयन

पाठ-संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्यम्

2.3 वज्जालग्ग (वज्जालग्गं) का परिचय

2.3.1 मूल-पाठ

2.3.2 हिन्दी-भावार्थ

बोधप्रश्न

2.4 णाणपंचमी कहाओ (ज्ञान-पंचमी कथा) का परिचय

2.4.1 मूल-पाठ

2.4.2 हिन्दी-भावार्थ

बोधप्रश्न

2.5 गाहासत्तसई-सुहासियं (गाथा सप्तशती सुभाषित) का परिचय

2.5.1 मूल-पाठ

2.5.2 हिन्दी-भावार्थ

बोधप्रश्न

2.6 उवासगदसाओ (उपासक-दशांग) का परिचय

2.6.1 मूल-पाठ

2.6.2 हिन्दी-भावार्थ

बोधप्रश्न

2.7 अप्रमादरतिः भिक्षुधर्मश्च

परिचय

2.7.1 मूल-पाठ

2.7.2 हिन्दी-भावार्थ

बोधप्रश्न

2.8 अमंगलियपुरिसस्स कहा (अमांगलिक पुरुष की कथा)

परिचय

2.8.1 मूल-पाठ

2.8.2 हिन्दी-भावार्थ

बोधप्रश्न

2.9 चउजामायराणं कहा (चार दामादों की कथा)

परिचय

2.9.1 मूल-पाठ

2.9.2 हिन्दी-भावार्थ

बोधप्रश्न

2.10 मूलदेव कहा (मूलदेव-कथा)

परिचय

2.10.1 मूल-पाठ

2.10.2 हिन्दी-भावार्थ

बोधप्रश्न

2.11 सारांशः

2.12 शब्दावली
2.13 बोधप्रश्नों के उत्तर
2.14 सन्दर्भ-ग्रन्थ
2.15 सहायकग्रन्थ
2.16 अभ्यासप्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्राकृत-साहित्य में अनेक विधाओं का प्रणयन किया गया है। उसे हम दो भागों में बांटकर देख सकते हैं। यथा धार्मिक एवं लौकिक साहित्य। धार्मिक से तात्पर्य है जो भगवान महावीर द्वारा दिये गये उपदेशों को विभिन्न कालखण्डों में अनेक आचार्यों नें लिपिबद्ध किया है। प्रथम शताब्दी से ही प्राकृत के लौकिक साहित्य की रचना विविध आचार्यों ने किया। इन रचनाओं में चरित साहित्य, काव्यसाहित्य कथा साहित्य के साथ ही अनेक लाक्षणिक रचनाएं मिलती है। संस्कृत की ही तरह से प्राकृत का भी विशाल वाड.मय उपलब्ध है। प्राकृत साहित्य की अनेक विधाएं हैं। जिनमें चरित्र, नीति-सुभाषित, कथा, अभिलेख काव्यादि रचनाएं मिलती हैं। कुछ प्रमुख रचनाओं को इस पाठ में उससे अवगत कराया जायेगा। जिससें कि विद्यार्थी प्राकृत के काव्य, कथा, नीति, सुभाषित उपदेशादि के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। जैसे वज्जालग्ग, ज्ञानपंचमीकथा, गाथासत्तसई, उपासकदशांग, अप्रमादरत भिक्षु, अमांगलिक पुरूषकथा, चार दामादों कथा, मूलदेव कथानक।

2.2 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन से आपको प्राकृत साहित्य में निहित विविध जीवनोपयोगी मूल्यों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी :-

- आप प्राकृत-काव्य की महत्ता को समझने में सक्षम होगे।
- सदाचार, नीतिगत एवं व्यावहारिक ज्ञान की प्राप्त हो सकेगी।
- व्यक्ति के अन्दर निहित विविध-गुणों का विकास हो सकेगा।
- आप मैत्री, सज्जन-दुर्जन तथा सत्पुरूषों के लक्षण आदि से अवगत हो सकेंगे।
- आप सम्यक्त्व, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, स्वदार-संतोष, इच्छा परिमाण और दिग्व्रत आदि व्रतों को समझने में सक्षम होगे।
- आप प्रमाद के लक्षण, चित्त-रक्षा के उपाय, भिक्षुधर्म के करणीय-कर्तव्य, आदि विषयों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- आप समाज में व्याप्त कुरीतियों, अमांगलिक-पुरुष का लक्षण, राजा और प्रजा के बीच पारस्परिक संबंध और स्वकर्म की निन्दा आदि के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- आप यह जान पायेंगे कि अपने सम्मान की रक्षा किस प्रकार करनी चाहिए?
- समाज में व्याप्त बुराइयों तथा उसके लिए राजा द्वारा किये गये कर्तव्यों का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।
- किसी भी कार्य को सुचारुरूप से करने के लिए स्वयं प्रयत्नशील होना आवश्यक है, इसका बोध हो सकेगा।

2.3 वज्जालग्ग (वज्जालग्गं) का परिचय

संस्कृत महाकाव्यों की ही तरह प्राकृत-साहित्य भी लिखा गया, जिसमें श्रृंगाररस को पर्याप्त महत्त्व दिया गया है। छन्दोबद्ध पद्य से मुक्त मुक्तक काव्य इस युग की विशेषता थी। इस काव्य में पूर्वापर-संबंध के बिना एक ही पद्य में पाठक के मन को चमत्कृत करने के लिए वाच्यार्थ की अपेक्षा व्यंग्यार्थ की प्रधानता रही है। गीतात्मक होने के कारण इसमें गेय-तत्त्व का समावेश भी हुआ है। गाहासत्तसई (गाथासप्तशती) मुक्तक-काव्य-साहित्य का उपजीव्य माना गया है।

वज्जालग्ग प्राकृत-साहित्य का दूसरा मुक्तककाव्य है। इसमें अनेक प्राकृत कवियों की सुभाषित गाथाएं संकलित हैं। इसमें कुल गाथाएं 795 हैं, जो 96 वज्जाओं में विषय की दृष्टि से विभक्त हैं। **वज्जा** शब्द विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, जिसका अर्थ है- **अधिकार या प्रस्ताव।** इसमें साहस, उत्साह, नीति, प्रेम, सुगृहिणी, षड्ऋतु, कर्मवाद आदि अनेक विषयों से सम्बन्धित गाथाएँ हैं। यह काव्य मानव को लोकमंगल की ओर प्रेरित करता है। प्रस्तुत पाठ में इस तरह की कुछ गाथाओं को आप पढ़ेंगे।

2.3.1 मूल-पाठ

अमियं पाइयकव्वं पढिउं सोउं च जे ण याणंति।
कामस्स तत्ततत्तिं कुणंति ते कहं ण लज्जंति॥ 1॥

दुक्खं कीरइ कव्वं कव्वम्मि कए पयुंजणा दुक्खं।
संते पउंजमाणे सोयारा दुल्लहा होंति॥ 2॥

पाइयकव्वम्मि रसो जो जायइ तह य छेयभणिएहिं।
उययस्स च वासियसीयलस्स तित्तिं ण वच्चामो॥ 3॥

देसियसद्दपलोट्टं महुरक्खरछंदसंठियं ललियं।
फुडवियडपायडत्थं पाइयकव्वं पढेयव्वं॥ 4॥

वे पुरिसा धरइ धरा अहवा दोहिं पि धारिया धरणी।
उवयारे जस्स मइ उवयरियं जो ण पम्हुसइ॥ 5॥

दिढलोहसंखलाणं अण्णाण वि विविहपासबंधाणं।
ताणं चिय अहिययरं वायाबंधं कुलीणस्स॥ 6॥

कत्तो उग्गमइ रवि कत्तो वियसंति पंकयवणाइं।
सुयणाण जत्थ णेहो ण चलइ दूरट्ठियाणं वि॥ 7॥

जं जि खमेइ समत्थो धणवंतो जं ण गव्वमुव्वहइ।
जं च सविज्जो णमिरो तिसु तेसु अलंकिया पुहवी॥ 8॥

अप्पाणं अमुणंता जे आरंभंति दुग्गमं कज्जं।
परमुहपलोइयाणं ताणं कह होइ जयलच्छी॥ 9॥

तुंगो च्चिय होइ मणो मणंसिणो अंतिमासु वि दसासु।
अत्थयंतस्स वि रविणो किरणा उद्धं चिय फुरंति॥ 10॥

ण महुमहणस्स वच्छे कमलाण णेय खीरहरे।
ववसायसायरे सुपुरिसाण लच्छी फुडं वसइ॥ 11॥

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

2.3.2 हिन्दी-भावार्थ

जो अमृतस्वरूप प्राकृत-वाक्य को पढ़ना और सुनना नहीं जानते हैं, वे (केवल) काम-सम्बंधी तत्त्व की चर्चा करते हुए लज्जित क्यों नहीं होते?।। 1।।

काव्य की रचना करना अत्यन्त कठिन है, काव्य करने पर (यदि काव्य की रचना हो भी जाय, तो) उसका प्रयोग करनेवाला और अधिक कठिन होता है, (उसका) प्रयोग करने पर (यदि प्रयोग कर भी दिया गया तो) उसके सुनने वाले अत्यन्त दुर्लभ होते हैं।। 2।।

विदग्ध लोगों के द्वारा ही कहे गये (रचित) प्राकृत-काव्य में जो रस मिलता है (वह अन्यत्र दुर्लभ है), (जैसे कि) शीतल और सुगन्धित जल से तृप्ति नहीं ही होती।। 3।।

देशी-शब्द से परिपूर्ण, मधुर-अक्षरों और छन्दों से सुव्यवस्थित, ललित, स्पष्ट एवं विकट दोनों तरह के अर्थों को प्रकट करनेवाला प्राकृत-काव्य अवश्य पढ़ना चाहिए।। 4।।

पृथ्वी दो प्रकार के पुरुषों को धारण करती है अथवा दो प्रकार के पुरुषों ने इसे धारण किया है– जिनकी मति उपकार में (लगी) है (तथा दूसरे वे हैं) जो किए गए उपकार को नहीं भूलते हैं ।। 5।।

कुलीन व्यक्ति का वाग्बन्धन (बात में बंध जाना), सुदृढ़ लौह-शृंखला तथा अन्य विविध पाशों के बंधन से भी अधिक (सुदृढ़) है।। 6।।

कहाँ सूर्य उदित होता है और कहाँ भला पङ्कजवन विकसित होते हैं, जहाँ दूर रहनेवाले सज्जनों का स्नेह नहीं चला जाता (वहाँ तक सूर्य का प्रकाश जाता है और जहाँ तक पङ्कजवन खिलते हैं, वहाँ तक सुजनों का स्नेह जाता है अर्थात् सर्वत्र चला जाता है)।। 7।।

जो मनुष्य समर्थ होने पर भी क्षमा करता है, धनवान होने पर भी गर्व नहीं करता और जो विद्वान् होने पर भी विनम्र रहता है– इन तीनों से पृथ्वी अलंकृत होती है।। 8।।

अपने प्राणों की चिंता बिना छोड़े (अर्थात्) स्वयं कष्ट न उठाते हुए, जो लोग दुर्गम (दु:साध्य) कार्य प्रारम्भ कर देते हैं, उन का मुँह देखने वालों को लक्ष्मी कैसे प्राप्त हो सकती है?।।9।।

मनस्वी लोगों का मन अन्तिम-अवस्था में भी (कठिन-परिस्थिति में भी) ऊँचा ही रहता है। अस्त होते हुए (भी) सूर्य की किरणें ऊपर ही प्रस्फुटित होती हैं।। 10।।

लक्ष्मी न तो विष्णु के वक्ष:स्थल पर रहती हैं, न कमलों के महल में और न शरीर-सिन्धु में, न तो क्षीरसागर में मधुसूदन भगवान् के वक्षस्थल पर, अपितु वह तो अनेक प्रकार से सत्पुरुषों के व्यवसाय-सागर में निवास करती हैं।। 11।।

बोध प्रश्न

1. प्राकृत-काव्य को क्या माना गया है?
2. प्राकृत की प्रकृति कैसी है?
3. पृथ्वी किन लोगों को धारण करती है?
4. पृथ्वी किससे अलंकृत है?

5. लक्ष्मी कहाँ निवास करती है?

2.4 णाणपंचमी कहाओ (ज्ञान-पंचमी कथा) का परिचय

भारतीय कथा-साहित्य की एक सुदीर्घ-परम्परा विकसित हुई है। इस साहित्य में अनेकानेक कथाएँ, वार्तायें, आख्यान, दृष्टांत, उपमा आदि उदाहरण मिलते हैं, जो शिक्षाप्रद होने के साथ-साथ प्रेरणादायक और मनोरंजक भी हैं। बिना पढ़े-लिखे, अथवा कम पढ़े-लिखे तथा बालक और अज्ञ-लोगों को भी बोध कराने के लिए कहानी की यह उत्कृष्ट-विधा है। पैशाची-भाषा में लिखा हुआ गुणाढ्य-रचित 'वड्ढकहा' (वृहत्कथा) कथा-साहित्य की सबसे प्राचीन रचना है। प्राकृत में कथा- साहित्य गद्य व पद्य दोनों में मिलता है। प्राकृत-कथाओं का प्रारंभ आगम-साहित्य में हुआ है, जहाँ संक्षिप्तरूप में कथा का ढाँचा प्राप्त होता है। उसके बाद आगम के व्याख्या-साहित्य में इन कथाओं को घटनाओं और वर्णनों से पुष्ट किया गया है। आगम साहित्य को आधार बनाकर प्राकृत में अनेक कथा-ग्रंथ लिखे गए। कथाओं की शैली और विविधरूपता के लिए प्राकृत कथा-साहित्य प्रसिद्ध है। **ज्ञानपंचमी** कथा महाराष्ट्री प्राकृत में निबद्ध एक महत्वपूर्ण कथा-ग्रंथ है। इसके कर्ता **महेश्वरसूरि** है। इस कृति में दस कथाओं का संग्रह है। सम्पूर्ण कथा गाथा-शैली में विरचित है, जो लगभग 2000 गाथाओं में प्राप्त है। इसकी सभी कथाएं ज्ञानपंचमी-व्रत के माहात्म्य को ही प्रकट करती हैं।

2.4.1 मूल-पाठ

वीर हलिओ वि हु भत्ता अणण्णभज्जो गुणेहिं रहिओ वि।
मा सगुणो बहुभज्जो जइ राया चक्कवट्टी वि॥ 1॥

संकर-हरि-बंभाणं गउरी लच्छी अहेव बंभाणी।
तह इज पइणो इट्ठा तो महिला इयरहा छेली॥ 2॥

विभवेण जो ण भुल्लइ जो ण वियारं करेइ तारुण्णे।
सो देवाणं वि पुज्जो किमंग पुण मणुयलोयस्स॥ 3॥

कण्णाद्धारविहीणं बोहित्थं जह जलम्मि डोल्लेइ।
सिट्ठं महंतयरहियं रज्जं पि हु तारिसं होइ॥ 4॥

वरजुवइ विलसिणं गंधव्वेण च एत्थ लोयम्मि।
जस्स ण हीरइ हिययं सो पसुओ अहव पुण देवा॥ 5॥

2.4.2 हिन्दी-भावार्थ

भैया! हलवाहा ही हो और गुणों से रहित ही हो, पर 'भर्त्ता' वह है, जो एक पत्नी वाला हो; अगर बहुपत्नीक, गुणी और चक्रवर्ती राजा भी हो, तो उसका 'भर्त्ता' होना व्यर्थ है॥ 1॥

शंकर, विष्णु तथा ब्रह्मा की जैसे गौरी, लक्ष्मी और ब्रह्माणी (अपने अपने पति को प्रिय) हैं, (उसीप्रकार को) पति को प्रिय है, तो वह स्त्री है, नहीं तो बकरी है॥ 2॥

सम्पत्ति मिल जाने पर जो (अपनों को) भूल नहीं जाता और तरुणाई में जिसे विकार नहीं होता, वह देवताओं का भी पूज्य है, फिर मनुष्यलोक की तो बात ही क्या!॥ 3॥

कर्णधार-रहित जहाज जैसे पानी में डोलता है, शिष्टों एवं महापुरुषों से रहित राज्य भी वैसा ही होता है॥ 4॥

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

श्रेष्ठ-युवतियों के विलास से और संगीत से इस लोक में जिसका हृदय आकृष्ट नहीं होता, वह पशु है अथवा देवता।। 5।।

बोध प्रश्न

6. चक्रवर्ती राजा एकपत्नीक या बहुपत्नीक श्रेष्ठ है?
7. पति को प्रिय नहीं है, तो वह किसके समान है?
8. किस तरह का मनुष्य पूज्य है?
9. शिष्टों और महापुरुषों से रहित राज्य कैसा होता है?
10. किस तरह का मनुष्य पशु या देवता है?

2.5 गाहासत्तसई-सुहासियं (गाथा सप्तशती सुभाषित) का परिचय

गाहासत्तसई (गाथासप्तशती) प्राकृत-साहित्य का प्रथम मुक्तक-कोश है। इसमें अनेक कवि और कवयित्रियों की चुनी हुई सात सौ गाथाओं का संकलन है। गाथाकोश की रचना प्रथम शताब्दी में राजा हाल ने एक करोड़ गाथाओं में से चुनकर किया है। बाणभट्ट ने इस ग्रंथ को 'गाथाकोश' कहा है। यह सात अध्यायों में विभक्त है। इसमें अधिकतर लोक-जीवन के विविध चित्रों की अभिव्यक्तियाँ हुई हैं। नायक-नायिकाओं की विशेष भावनाओं और चेष्टाओं का चित्रण भी इस ग्रंथ की गाथायें करती हैं।

2.5.1 मूल-पाठ

1. **आरम्भंतरस्स धुवं लच्छी मरणं वि होइ पुरिसस्स।**
   तं मरणमणारम्भे वि होइ लच्छी उण ण होइ।। 1.42।।

2. **तं मित्तं काअव्वं जं किर वसणम्मि देसआलम्मि।**
   आलिहिअ-भित्तिवाउल्लअं व ण परम्मुहं ठाइ।। 3.17।।

3. **सुअणो ण कुप्पइ च्चिअ अह कुप्पइ विप्पिअं ण चिंतेइ।**
   अह चिंतेइ ण जंपइ अह जंपइ लज्जिरो होइ।। 3.50।।

4. **सो अत्थो जो हत्थे तं मित्तं जं णिरंतरं वसणे।**
   तं रूअं जत्थ गुणा तं विण्णाणं जहिं धम्मो। 3.51।।

5. **अउलीणो दोमुहओ ता महुरो भोअणं मुहे जाव।**
   मुरओव्व खलो जिण्णम्मि भोअणे विरसमारसई।। 3.53।।

6. **फलसंपत्तीअ समोणआइ तुंगाइं फलविपत्तीए।**
   हिअआइ सुपुरिसाणं महातरूणं व सिहराइं।। 3.82।।

7. **तुंगो च्चिअ होइ मणो मणंसिणो अंतिमासु वि दसासु।**
   अत्थमणम्मि वि रइणो किरणा उद्धं चिअ फुरंति।। 3.84।।

8. **वसणम्मि अणुव्विग्गा विहवम्मि अगव्विआ भए धीरा।**
   होंति अहिण्णसहावा समेसु विसेमेसु सप्पुरिसा ।। 4.80।।

9. **दुस्सिखिअरअणपरिक्खएहिँ घिट्टोसि पत्थरे तावा।**
   जा तिलमेत्तं वट्टसि मरगअ ! का तुअ मुल्लकहा।। 7.27।।

10. **जे जे गुणिणो जे जे अ चाइणो जे विअड्ढविण्णाणा।**
    दारिद्द रे ! विअक्खणं ताणं तुमं साणुराओ सि।। 7.71।।

11. **धण्णा बहिरा अंधा ते च्चिअ जीअंति माणुसे लोए।**
ण सुणंति पिसुणवअणं खलाण रिद्धिं ण पेक्खंति॥ 7/95॥

2.5.2 हिन्दी-भावार्थ

1. कार्य को आरम्भ करनेवाले पुरुष को निश्चय ही लक्ष्मी (सफलता) अथवा (अधिक से अधिक) मृत्यु की प्राप्ति होती है। मृत्यु तो कार्य आरम्भ करने पर भी होती है, परन्तु लक्ष्मी उसे नहीं मिलती है।

2. मित्र उस (व्यक्ति) को बनाना चाहिए जो किसी भी देश में, किसी भी काल में और किसी भी आपत्ति में कभी भी दीवाल पर अभिलिखित (चित्रित) पुतली के सदृश पराङ्मुख न हो।

3. (सामान्य रूप से) सज्जन पुरुष कुपित ही नहीं होता, यदि कुपित भी होता है तो अप्रिय नहीं सोचता है। यदि अप्रिय सोचता भी है, तो कहता नहीं है और यदि कहता है तो लज्जित होता है।

4. धन वही है, जो हाथ में हो, मित्र वही है, जो आपत्ति में सदा साथ देवे, रूप वही है जिसमें गुण हो और विज्ञान वह है, जिसमें धर्म हो।

5. असत्कुल में उत्पन्न दोमुहाँ दुष्ट मनुष्य, पुथ्वी का स्पर्श न करने वाले (अ+कु+लीन) द्विमुख मृदंग या मुख नामक वाद्य के समान मुँह में भोजन ठूस देने पर मधुर शब्द करता है, परन्तु उस भोजन या आटा के जीर्ण हो जाने पर कटु शब्द करता है।

6. सज्जनों के हृदय विशाल तरुओं के शिखरों की भाँति फल-सम्पत्ति के आने पर नम्र हो जाते हैं और फल-विपत्ति आने पर (फलों के नष्ट हो जाने पर, वैभव नष्ट होने पर) अत्युच्च (उन्नत, स्वाभिमानयुक्त) हो जाते हैं।

7. मनस्वी का हृदय अन्तिम अवस्थाओं (मरणासन्न दशाओं) में भी उन्नत ही रहता है। अस्त होते हुए भी सूर्य की किरणें सदा ऊपर की ओर ही स्फुरित होती हैं।

8. सत्पुरुष विपत्ति में उद्विग्न नहीं होते हैं, वैभवता में गर्व नहीं करते हैं और भय के समय धैर्यवान् होते हैं। (इस प्रकार वे) सम (अनुकूल) तथा विषम (प्रतिकूल) परिस्थितियों में एक समान-स्वभाव वाले होते हैं।

9. हे मरकतमणि ! अनाड़ी रत्नपरीक्षकों के द्वारा तुम पत्थर पर इतने घिसे गये हो कि अब तिलमात्र रह गये। तुम्हारे मूल्य की बात ही क्या ? अर्थात् इतना परखे जाने पर भी अनाड़ी जौहरी तुम्हारा मूल्यांकन नहीं कर सके।

10. हे दारिद्र्य ! तुम बहुत चतुर हो क्योंकि जो गुणी हैं, जो त्यागी हैं और जो प्रकाण्ड पण्डित हैं, तुम उन्हीं से अनुराग करते हो।

11. मनुष्य लोक में अन्धे और बहरे लोग धन्य हैं, वे ही वास्तव में

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

जीवित हैं। क्योंकि वे न तो पिशुनों के वचन सुनते हैं, और न दुष्टों की समृद्धि को देखते हैं।

बोध प्रश्न

11. कार्य-आरंभ से क्या मिलता है?

12. मित्र किसप्रकार का हो?

13. सज्जनों के हृदय किन-परिस्थितियों में कैसे होते हैं?

14. मनुष्यलोक में कौन लोग धन्य हैं और क्यों?

2.6 उवासगदसाओ (उपासक-दशांग) का परिचय

उवासगदसाओ (उपासकदशांग) द्वादशांगजिन वाणी का एक अंग-ग्रंथ है। यह दश अंगसूत्रों में एकमात्र ऐसा सूत्र है, जिसमें सम्पूर्ण श्रमणोपासक या श्रावक-जीवन की चर्चा है। भगवान् महावीर के समसामयिक आनन्द, कामदेव, चुलनीपिता, सुरादेव, चुल्लशतक, कुंडकौलिक, सकडालपुत्र, महाशतक, नन्दिनीपिता तथा शालिहीपिता– इन दश श्रावकों का जीवन-चरित वर्णित है। व्रतों के पालन में अथवा धर्म की आराधना में उपस्थित होने वाले विघ्नों व समस्याओं का सामना साधक कैसे करें?- इसका प्रतिपादन करना ही इन कथाओं का प्रमुख प्रतिपाद्य है। प्रस्तुत-पाठ में आनन्द श्रावक के जीवन की दशा का वर्णन है। मनुष्य-जीवन प्रकृति प्रदत्त एक अमूल्य निधि है। अत: अच्छे विचारों के साथ इसे व्यतीत करें और समाज में व्याप्त बुराइयों से बच सकें।

2.6.1 मूल-पाठ

इह खलु आणंदा इ समणे भगवं महावीरं आणंदं समणोवासगं एवं वयासी–एवं खलु, आणंदा! समणोवासाएणं अभिगम जीवाजीवेणं जाव अणइक्कमणिज्जेणं सम्मत्तस्स पंच अइयारा पेयाला जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा-संका, कंखा, विइगिच्छा, परपासंड-पसंसा, पर-पासंड-संथवे॥1॥

तयाणंतरं च णं थूलगस्स पाणाइवाय-वेरमणस्स समणोवासएणं पंच अइयारा पेयाला जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा बंधे, वहे, छविच्छेए, अइभारे, भत्तपाण-वोच्छेए॥ 2॥

तयाणंतरं च णं थूलगस्स मुसावायवेरमणस्स पंच अइयारा जाणियव्वा न समाअरियव्वा। तं जहा–रसअब्भक्खाणे, रहसाभक्खाणे सदार-मंत-भेए, मोसोवएसे, कूड-लेह-करणे॥ 3॥

तयाणंतरं च थूलगस्स अदिण्णादाणवेरमणस्स पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा–तेणाहडे, तक्करप्पओगे, विरुद्धरज्जा-इक्कमे, कूड-तुल्ल-कूड-माणे, तप्पडिरूवग-ववहारे॥ 4॥

तयाणंतरं च णं सदार-संतोसीए पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा–इत्तरिय-परिग्गहिया-गमणे, अपरिग्गहियागमणे, अणंगकीडा, पर-विवाह-करणे, काम-भोगतिव्वाभिलासे॥ 5॥

तयाणंतरं च णं इच्छा-परिमाणस्स समणोवासएणं पंच अइयारा जाणियव्वा, ण समायरियव्वा। तं जहा–खेत्तवत्थु-पमाणाइक्कमे, हिरण्ण-सुवण्ण-पमाणाइक्कमे, दुपय-चउप्पय-पमाणाइक्कमे, धण-धन्न-पमाणाइक्कमे, कुविय-पमाणाइक्कमे॥ 6॥

तयाणंतरं च णं दिसि-व्वयस्स पंच अइयारा जाणियव्वा, ण समायरियव्वा तं जहा–उड्ढदिसि पमाणाइक्कमे, अहो-दिसि-पमाणाइक्कमे, तिरियदिसिपमाणा-इक्कमे, खेत्त-वुड्ढी, सइ-अंतरद्धा।। 7।।

2.6.2 हिन्दी-भावार्थ

श्रमण भगवान् महावीर ने आनन्द श्रमणोपासक से इसप्रकार कहा– आनन्द! जीवों एवं अजीवों को अच्छी प्रकार जान लेने वाले, अनतिक्रमणीय श्रमणोपासक को सम्यक्त्व के पाँच प्रकार के बुरे आचरण को जानना चाहिए तथा उनका आचरण नहीं करना चाहिए। वे इसप्रकार हैं– शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, विपरीत धर्म को माननेवाले की प्रशंसा तथा विपरीत धर्म को माननेवालों के साथ निकटता का सम्बन्ध।। 1।।

तदनन्तर श्रमणोपासक को प्राणियों के बुरे प्रयोगों के स्थूल तरीकों के पाँच अतिचारों (दुर्व्यवहारों) को जानना चाहिए तथा उनका आचरण नहीं करना चाहिए। वे इस प्रकार हैं–बन्ध (पशु आदि को कठोर बन्धन से बाँधना), वध (किसी अंग को काटना), अतिभार (सामर्थ्य से अधिक भार लादना), भोजन एवं पानी न देना।। 2।।

तदनन्तर स्थूल-असत्य बोलने से हटने के पाँच अतिचारों (दुर्व्यवहारों) को श्रमणोपासक को जानना चाहिए तथा उनका आचरण नहीं करना चाहिए। वे इसप्रकार हैं– रहस्य को खोल देना, एकान्त में कही गयी बात को प्रकट कर देना कुछ कहना, अपनी पत्नी के साथ मन्त्रभेद, असत्य-बातों का उपदेश तथा असत्य-लेखों को तैयार करना।। 3।।

तदनन्तर स्थूल चोरी से रुकने के पाँच अतिचारों (दुर्व्यवहारों) को जानना चाहिए तथा उसका आचरण नहीं करना चाहिए। वे इसप्रकार हैं–चोर के द्वारा लायी गयी वस्तु को स्वीकार करना, चोरी करवाना, विरुद्धराज्य का अतिक्रमण, गलत तराजू और गलत बाट तथा मिलावट के द्वारा अशुद्ध-वस्तु का शुद्ध-वस्तु के रूप में व्यवहार।। 4।।

तदनन्तर स्वदारसन्तोषी-व्रत के पाँच अतिचारों (दुर्व्यवहारों) को जानना चाहिए तथा उनका आचरण नहीं करना चाहिए। वे इसप्रकार हैं– चंचल किन्तु परिगृहीता स्त्री के पास गमन, अपरिगृहीता स्त्री के पास गमन, अनंग (अप्राकृतिक) क्रीड़ा, दूसरे अपरिचित का विवाह कराना, काम एवं भोग में तीव्र अभिलाषा।। 5।।

तदनन्तर इच्छा के परिमाण को श्रमणोपासक को जानना चाहिए तथा उनका आचरण नहीं करना चाहिए। वे इसप्रकार हैं– खेत और गृहसम्बन्धी प्रमाण का अतिक्रमण, हिरण्य-सुवर्ण-प्रमाण का अतिक्रमण, द्विपद-चतुष्पद-प्रमाण का अतिक्रमण, धनधान्य-प्रमाण का अतिक्रमण तथा गृहोपकरण (वस्त्र, बर्तन, शय्या, आसन आदि) सम्बन्धी प्रमाण का अतिक्रमण।। 6।।

तदनन्तर दिग्व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए एवं उनका आचरण नहीं करना चाहिए। वे इसप्रकार हैं–ऊर्ध्वदिशा के प्रमाण का अतिक्रमण, अधोदिशा के प्रमाण का अतिक्रमण, तिरछी दिशा के प्रमाण का अतिक्रमण, रहने के स्थान पर दूसरे के क्षेत्र में बढ़ना, एवं स्मृतिनाश।। 7।।

बोध-प्रश्न

15. श्रमणोपासक को अहिंसाणुव्रत के कौन से पाँच बुरे आचरण नहीं करना चाहिए।
16. सत्याणुव्रत के कौन-से पाँच अतिचार (दुर्व्यवहार) बताए हैं?
17. स्थूल-चोरी के कौन से पाँच अतिचार (दुर्व्यवहार) हैं?

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

18. स्वदारसंतोष-व्रत के पाँच अतिचार कौन से हैं?

19. 'दिग्व्रत' के पाँच अतिचार बताइये?

2.7 अप्रमादरतिः भिक्षुधर्मश्च परिचय

'अप्रमादरति भिक्षुधर्मश्च' पाठ खोतानी-प्राकृत में लिखा गया है। खोतानी- प्राकृत की लिपि 'खरोष्ठी' थी। इसमें शिलालेख भी मिलते हैं। प्राचीन प्राकृत में खोतानी-प्राकृत का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बौद्ध-साहित्य का एक मात्र ग्रंथ 'धम्मपद' खोतानी-प्राकृत में है। इस पाठ में तथागत बुद्ध ने भिक्षुओं को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए?- इस संदर्भ में सम्यक् उपदेश दिए हैं।

2.7.1 मूल-पाठ

अप्रमादेन मकव्ह देवाण समिद्धिगदु।
अप्रमद प्रशजदि प्रमदु गरदितु सद॥ 1॥

हिण-धम न जेव, अ प्रमदेण न जवजि।
मिछदिठि स रोय अ न जि अ-लोक-वढणो॥ 2॥

यो दु पुवि प्रमजति पछ सु न प्रमजदि।
सो इद लोकु ओहजेदि अभ मुतो व सुरि' उ॥ 3॥

अरहथ निखमध युजथ बध-शशणे।
युणध मुचुणो जेण नडकर ब कुञरु॥ 4॥

अप्रमद स्वदिमद सुशिल भोदु भिक्षवि।
सुजमहिद-जगप जचित अणुरक्षध॥ 5॥

यो इमस धम-विण' इ अप्रमतु विहषिदि।
प्रह' इ जदि-जत्शर दुखुसद करिषिदि॥ 6॥

त यु वदमि भुद्रञु यपदेथ जमकद।
अप्रमद रद भोध जधमि सुप्रवेदिदि॥ 7॥

प्रमद परिवजेति अप्रमद रद जद।
भवेथ कुशल धम योक-क्षेमज प्रत' अ॥ 8॥

सलाभं सदिमञे' अ नञेष स्विह' ओ षि' अ।
अञेष स्विह' ओ भिखु जमधि नधिकछदि॥ 9॥

अप-लभो दु यो भिखु जलव्हु नदिमञदि।
त गु देव प्रशजदि सुध-यिव अतद्रिद॥ 10॥

कमस्मु कम-रदु कमु अणुविचिद' ओ।
कसु अणुस्वरो भिखु जधर्म परिहयदि॥ 11॥

धरमसु धम-रदु धमु अणुविचिद' ओ।
धमु अणुस्वरो भिखु जधर्म परिहयदि॥ 12॥

न शीलवदमत्तेण बहोषुकेण व मणो।
अध जमधि लभेण विवित-शयणेण व॥ 13॥

फुषमु नेखम-सुखु अप्रधजण-जेविद।
भिखु विश्पशम् अ (पदि) अप्रते असव-क्षये॥ 14॥

न भिखु तवद भोदि यवद भिक्षदि पर।
विश्प धर्म जमदइ भिखु भोदि न तवद॥ 15॥

यो दु बहेति पवण वदव ब्रम्म-यियव।
जग'इ चरदि लोकु सो दु भिखु दु वुचदि॥ 16॥

मेत्र-विहरि यो भिखु प्रजनु बुध-शशणे।
दुणदि पवक धर्म द्रुम-पत्र ब मदुरु॥ 17॥

मेत्र-विहर यो भिखु प्रजनु बुध-शशणे।
पडिविजु पद शद जगरवोशमु सुह॥ 18॥

2.7.2 हिन्दी-भावार्थ

अप्रमाद से देवताओं को समृद्धि होती है। अप्रमाद प्रशंसित है (और) प्रमाद सदा गर्हित (है)॥ 1॥

हीनधर्म (असद्धर्म) की सेवा नहीं करनी चाहिए, प्रमाद की सेवा नहीं करनी चाहिए। मिथ्यादृष्टि का सेवन नहीं करना चाहिए (और इस दृष्टि से) लोक में प्रसिद्ध होने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए॥ 2॥

जो पहले प्रमाद करता है, पर बाद में प्रमाद नहीं करता है, वह बादलों से मुक्त सूर्य की तरह इस लोक को प्रकाशित करता है॥ 3॥

अर्हत् बनो, निष्काम बनो, बुद्ध के शासन में तत्पर बनो। अपनी शक्ति से मृत्यु के पाश को उस तरह तोड़ डालो, जैसे नरकुल के घर को हाथी तोड़ डालता है॥ 4॥

हे भिक्षुओ! प्रमादरहित होकर, स्मृतिशील होकर, सुशील होकर, एकाग्रभाव से दृढ़-संकल्प होकर, अपने चित्त की रक्षा करो (नियन्त्रण में रखो)॥ 5॥

जो इस धर्म के अनुशासन में अप्रमत्त होकर, विहार करेगा, वह जन्म और संसार से मुक्त होकर मृत्यु का अन्त करेगा॥ 6॥

जितने लोग यहाँ हैं, उनसे मैं कहता हूँ कि 'तुम्हारा कल्याण हो, अच्छी तरह समझाये गये सद्धर्म में सावधानी से तत्पर बनो'॥ 7॥

सावधान (अप्रमादी) व्यक्ति बराबर प्रमाद से बचता है। भिक्षुओ! तुम्हें योग-क्षेम के लिए कुशल-धर्म में लगा होना चाहिए॥ 8॥

अपने ही लाभ को सब कुछ नहीं मानना चाहिए तथा दूसरों के साथ स्पृहा नहीं करनी चाहिए। दूसरों के साथ स्पृहा रखने वाला भिक्षु कभी समाधि (एकाग्रता) को नहीं प्राप्त कर सकता॥ 9॥

जो भिक्षु अल्पलाभवाला होकर अपने लाभ को सब कुछ नहीं मानता, उसी शुद्ध जीवनवाले जागरूक भिक्षु की देवता प्रशंसा करते हैं॥ 10॥

(विषयवासना) काम में रमण करनेवाला, काम में लीन, काम की चिन्ता करने वाला, काम का निरन्तर स्मरण करनेवाला भिक्षु स्वधर्म से च्युत हो जाता है॥11॥

धर्म में रमण करनेवाला, धर्म में लीन, धर्म की चिन्ता करने वाला, धर्म का स्मरण करनेवाला भिक्षु स्वधर्म से च्युत नहीं होता॥ 12॥

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

न तो शीलव्रत के साधन से और न तो बहुत ज्यादा उत्सुकता दिखलाने से, न समाधि लेने से, न एकान्त में सोने से (नैष्कर्म्य का सुख प्राप्त होता है)। जिसका उपभोग इतरजन नहीं कर सकते, उस नैष्कर्म्य-सुख को हम प्राप्त करते हैं (इस प्रकार सोचते हुए) जब तक मलों का क्षय नहीं होता, तब तक भिक्षु को विश्वास करते रहना चाहिए।। 13-14।।

दूसरों से भिक्षा माँगने से ही भिक्षु नहीं होता। केवल गेरुआ वेश (गेरुये रंग के कपड़े पहनने से) का धर्म मात्र स्वीकार करने से भिक्षु नहीं होता।। 15।।

जो पाप छोड़कर व्रतशील और ब्रह्मचर्यशील होता है तथा इस लोक में ज्ञानपूर्वक आचरण करता है, वही भिक्षु कहा जाता है।। 16।।

बुद्ध के शासन में रमा हुआ जो भिक्षु मैत्रीपूर्वक विचरण करनेवाला है, वही पाप को झकझोरकर उसीप्रकार फेक सकता है, जैसे कि हवा पत्तों को पेड़ से अलग कर देती है।। 17।।

बुद्ध के शासन में रमा हुआ जो भिक्षु मैत्रीपूर्वक विहार करता है, वही संस्कारों के उपशमरूप सुख तथा शान्तपद को प्राप्त करता है।। 18।।

बोध प्रश्न

20. इस लोक को कौन प्रकाशित करता है?

21. भिक्षु के क्या कर्तव्य बतलाए गये हैं?

22. कैसा भिक्षु कभी समाधि को प्राप्त नहीं कर सकता?

23. कौन भिक्षु का स्वरूप बताइये है?

2.8 अमंगलियपुरिसस्स कहा (अमांगलिक पुरुष की कथा) परिचय

प्राकृत-साहित्य में, समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने के लिए रोचक उपाय बताया है। इस के लिए कथानकों को लिया गया है। हम कर्म-फल के लिए अपने कृत्य को देखें, न कि बाह्य-कारणों को। जैसे आज किसका मुँह देखा कि अशुभ हो रहा है, या अशुभ होने पर दूसरे को दोष देते हैं। इस पाठ का लक्ष्य यह है कि अनावश्यक-कुरीतियों में न उलझें और अपने कर्मों पर ध्यान दें।

2.8.1 मूल-पाठ

एगंमि नयरे एगो अमंगलिओ मुद्धो पुरिसो आसि। सो एरिसो अत्थि, जो को वि पभायंमि तस्स मुहं पासेइ, सो भोयणं पि न लहेज्जा। पउरा वि पच्चूसे कया वि तस्स मुहं न पिक्खंति। नरवइणावि अमंगलियपुरिसस्स वट्टा सुणिआ। परिक्खणथं णरिंदेण एगया पभायकाले सो आहूओ, तस्स मुहं दिट्ठं।

जया राया भोयणत्थमुवविसइ, कवलं च मुहे पक्खिवइ, तया अहिलंमि नयरे अकम्हा परचक्कभएण हलबोलो जाओ। तया नरवई वि भोयणं चिच्चा सहसा उत्थाय ससेण्णो नयराओ बहिं निग्गओ। भयकारणमदट्ठूण पुणो पच्छा आगओ समाणो नरिंदो चिंतेइ-"अस्स अमंगलियं अस्स बोल्लाविऊण सरूवं मए पच्चक्खं दिट्ठं, तओ एसो हंतव्वो" एवं चिंतिऊण अमंगलियं बोल्लाविऊण वहत्थं चंडालस्स अप्पेइ।

जया एसो रुयंतो, सकम्मं निंदंतो चंडालेण सह गच्छेइ। तया एगो कारुणिओ बुद्धिणिहाणो वहाइ नेइज्जमाणं तं दट्ठूणं कारणं णच्चा तस्स रक्खणाय कण्णे किंपि कहिऊण उवायं दंसेइ। हरिसंतो जया वहत्थंभे ठविओ, तया चंडालेण सो पुच्छिओ–'जीवणं विणा तव कावि इच्छा सिया, तया मग्गसु त्ति।'

सो कहेइ–"मज्झ नरिंदमुहदंसणेच्छा अत्थि"। जया सो नरिंदसमीवमाणीओ तया नरिंदो तं पुच्छइ–"किमेत्थ आगमणपओयणं?"। सो केहेइ–"हे नरिंद! पच्चूसे मम मुहस्स दंसणेण भोयणं न लब्भइ, परंतु तुम्हाणं मुह पेक्खणेण मम वहो भविस्सइ, तथा पउरा किं कहिस्संति?। मम मुहाओ सिरिमंताणं मुहदंसणं केरिसफलयं संजायं, नायरा वि पभाए तुम्हाणं मुहं कहं पासिहिरे"। एवं तस्स वयणजुत्तीए संतुट्ठो नरिंदो वहाएसं निसेहिऊण पारितोसिअं च दच्चा तं अमंगलिअं संतोसीअ।

2.8.2 हिन्दी-भावार्थ

एक नगर में एक अमांगलिक मूर्ख-पुरुष था। वह ऐसा था कि जो कोई भी प्रभात में उसके मुख को देखता, वह उस दिन भोजन भी नहीं पाता (उसे भोजन भी नहीं मिलता)। नगर के निवासी प्रात:काल में कभी भी उसके मुंह को नहीं देखते थे। राजा के द्वारा भी अमांगलिक पुरुष की बात सुनी गयी थी। परीक्षा के लिए राजा के द्वारा एक बार प्रभातकाल में वह बुलाया गया।

अमांगलिक पुरुष का मुख देखकर ज्यों हि राजा भोजन के लिए बैठा और मुंह में (रोटी का) ग्रास रखा त्यों हि समस्त नगर में अकस्मात् शत्रु के द्वारा आक्रमण के भय से शोरगुल हुआ। तब राजा भी भोजन को छोड़कर (और) शीघ्र उठकर सेना-सहित नगर से बाहर गया और भय के कारण बीत जाने पर वापस आया। अहंकारी राजा ने सोचा– इस अमांगलिक के स्वरूप को मेरे द्वारा प्रत्यक्ष देखा गया, इसलिए यह मारा जाना चाहिए। इस प्रकार विचारकर अमांगलिक को बुलवाकर वध के लिए चांडाल को सौंप दिया।

जब यह अमांगलिक रोता हुआ स्व-कर्म की निन्दा करता हुआ चाण्डाल के साथ जा रहा था। तब एक दयावान बुद्धिमान ने वध के लिए ले जाए जाते हुए उसको देखकर, कारण को जानकर उसकी रक्षा के लिए उसके कान में कुछ कहकर उपाय सुझाया। (इसके फलस्वरूप वह) प्रसन्न होते हुए चला। जब (वह) वध के खम्भे पर खड़ा किया गया तब चाण्डाल ने उससे पूछा- जीवन के अलावा कोई तुम्हारी, (वस्तु की) इच्छा हो, तो (तुम्हारे द्वारा) (वह वस्तु) मांगी जानी चाहिए।

उसने कहा "मेरी इच्छा राजा के मुख-दर्शन की है।" तब वह राजा के सामने लाया गया। राजा ने उसको पूछा– "यहाँ आने का प्रयोजन क्या है?" उसने कहा– "हे राजन्! प्रात:काल में मेरे मुख के दर्शन से (तुम्हारे द्वारा) भोजन ग्रहण नहीं किया गया, परन्तु तुम्हारा मुख देखने से मेरा वध होगा तब नगर के निवासी क्या कहेंगे? मेरे मुँह (दर्शन) की तुलना में श्रीमान् का मुख-दर्शन कैसा फल उत्पन्न करता है? नागरिक भी प्रभात् में तुम्हारे मुख को कैसे देखेंगे?" इसप्रकार उसकी वचन की युक्ति से संतुष्ट हुए राजा ने वध के आदेश को रद्द करके और उसको पारितोषिक देकर उस अमांगलिक को संतुष्ट किया।

बोध प्रश्न

24. अमांगलिक पुरुष किसे कहते हैं?
25. अमांगलिक पुरुष की राजा ने कैसे परीक्षा की?
26. अमांगलिक पुरुष को क्या सजा मिली?
27. अमांगलिक पुरुष अपनी सजा से कैसे बचा?

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

2.9 चउजामायराणं कहा (चार दामादों की कथा) परिचय

आगम-साहित्य में छोटी-बड़ी सहस्रों कथाएँ प्राप्त हैं; जो अकथा, सत्कथा, विकथा आदि के रूप में जानी जाती हैं। आगम-साहित्य में धार्मिक आचार, आध्यात्मिक तत्त्व-चिन्तन तथा नीति और कर्तव्य का प्ररूपण कथाओं के माध्यम से किया गया है। प्राचीन आचार्यों ने अनेक लघु प्राकृत कथाओं का प्रणयन किया है, जिनमें संसार की अनेक व्यंग्यपूर्ण-कथाओं की रचना उपलब्ध है। इस पाठ में चार दामादों की रोचक-कथा है। समाज में दामाद प्रायः ससुराल में आकर वहाँ की सुख-सुविधाओं को देखकर अधिक दिवस तक रुक जाते हैं। इस पाठ में ससुराल को स्वर्ग के समान माना गया है। कभी-कभी उनको भगाने के लिए बहुत प्रयास किए जाते हैं। उन्हीं प्रयासों का इस कथा में रोचक-विवेचन किया गया है।

2.9.1 मूल-पाठ

कत्थ वि गामे नरिंदस्स रज्जसंतिकारगो पुरोहिओ आसि। तस्स एगो पुत्तो पंच य कन्नगाओ संति। तेण चउरो कन्नगाओ विउसमाहणपुत्ताणं परिणाविआओ। कयाई पंचमीकन्नाए विवाहमहूसवो पारद्धो। विवाहो चउरो जामाउणो समागया। पुण्णे विवाहे जामायरेहिं विणा सव्वे संबंधिणो नियनियघरेसु' गया। जामायरा भोयणलुद्धा गेहे गंतुं न इच्छंति। पुरोहिओ विआरेइ–'सासूए अईव पिया जामायरा, तेण अहुणा पंच-छह दिणाइं एए चिट्ठंतु, पच्छा गच्छेज्जा।'

ते जामायरा खज्जरस-लुद्धा तओ गच्छिउं न इच्छेज्जा। परुप्परं ते चिंतेइरे–"ससुरगिह-निवासो सग्गतुल्लो नराणं" किल एसा सुत्ती सच्चा, एवं चिंतिऊण एगाए भित्तीए एसा सुत्ती लिहिआ। एगया एयं सुत्तिं वाइऊण ससुरेण चिंतिणं–"एए जामायरा खज्जरस-लुद्धा कयावि न गच्छेज्जा, तओ एए बोहियव्वा" एवं चिंतिउण तस्स सिलोगपायस्स हिट्ठंमि पायत्तिगं लिहिअं–

"जइ वसइ विवेगी पंच छव्वा दिणाइं।
दहि-घय-गुड-लुद्धो मासमेगं वसेज्जा,
व हवइ खरतुल्लो माणवो माणहीणो"॥ 1॥

ते जामायरा पायत्तिगं वाइऊणं पि खज्जरस-लुद्धत्तणेण तओ गंतु नेच्छंति। ससुरो वि चिंतेइ–'इहं एए नीसारियव्वा?, साउभोयणरया एए खरसमाणा माणहीणा, तेण जुत्तीए निक्कासणिज्जा'। पुरोहिओ नियं भज्जं पुच्छइ–'एएसिं जामाऊणं भोयणाय किं देसि'?। सा कहेइ 'अइप्पिय-जामायराण तिकालं दहि-घय-गुड-मीसिअमन्नं पक्कन्नं च सएव देमि'। पुरोहिओ भज्जं कहेइ–'अज्जदिणाओ आरब्भ तुमए जामायराणं वज्जकुडो विव थूलो रोट्टगो घयजुत्तो दायव्वो।

पियस्स आणा अइइक्कमणीअ त्ति चिंतिऊणं,
सा भोयणकाले ताणं थूलं रोट्टगं, घयजुत्तं देइ।

तं दट्टूणं पढमो मणीरामो, जामाया मित्ताणं कहेइ'–'अहुणा एत्थ वसणं न जुत्तं, नियधरंमि अओ वि साउभोयणं अत्थि, तओ इओ गमणं चिय सेयं, ससुरस्स पच्चूसे कहिऊण हं गमिस्सामि'। ते कहिंति–'भो मित्त! विणा मुल्लं भोयणं कत्थ सिया, एसो वज्जकुडरोट्टगो साउत्ति गणिऊण भोत्तव्वो। जआ– 'परन्नं दुल्लहं लोगे' इअ सुई तए किं न सुआ? तत्थ इच्छा सिया तया गच्छसु, अम्हे उ जया ससुरो कहिही तया गमिस्सामो'। एवं मित्ताणं वयणं सोच्चा पभाए ससुरस्स अग्गे गच्छित्ता सिक्खं आणं च मग्गेइ। ससुरो वि तं सिक्खं दाऊण पुणरवि आगच्छेजा, एवं कहिऊण किंचि अणुसरिऊण अणुण्णं देइ। एवं पढमो जामायरो 'वज्जकुडेण मणीरामो' निस्सारिओ।

पुणरवि भज्जं कहेइ– अज्जप्पभिइं जामायराणं तिलतेल्लेण जुत्तं रोट्टगं दिज्जा। सा भोयणसमए जामाऊणं तेल्लजुत्तं रोट्टगं देइ। दट्ठूण माहवो नाम जामायरो चिंतेइ– घरंमि वि एयं लब्भइ, तओ इओ गमणं सुहं। मित्ताणं पि कहेइ– हं कल्ले गमिस्सं, जओ भोयणे तेल्लं समागय। तया ते मित्ता कहिंति–'अम्हकेरा सासू विउसी अत्थि, जेण सीयाले तिलतेल्लं चिअ उयरग्गिदीवणेण सोहणं, न घयं, तेण तेल्लं देइ, अम्हे उ एत्थ ठास्सामो'। तया माहवो नाम जामायरो गच्चा सिक्खं अणुण्णं च मग्गेइ। तया ससुरो 'गच्छ गच्छ' त्ति अणुण्णं देइ, न सिक्खं। एवं 'तिलतेल्लेण माहणो' बीओ वि जामायरो गओ।

तइअ–चउत्थजामायरा न गच्छंति। 'कहं एए निक्कासणिज्जा' इअ चिंतित्ता लद्धुवाओ ससुरो भज्जं पुच्छेइ–"एए जामाउणो रत्तीण सयणाय कया आगच्छंति?" तया पिया कहेइ– "कयाइ रत्तीए पहरे गए आगच्छेज्जा कया दुतिपहरे गए आगच्छति"। पुरोहिओ कहेइ– "अज्ज रत्तीए। तुमए दारं न उग्घाडियव्वं।"

अहं जागरिस्सं। ते दोण्णि जामायरा संझाए गामे विलसिउं गया, विविहकीलाओ कुणंता नट्टाइं च पासंता, मज्झरत्तीए गिहद्दारे समागया। पिहिअं दारं दट्ठूण दारुग्घाडणाए उच्चयरेण रविंति–'दारं उग्घाडेसु' त्ति। तया दारसमीवे सयणत्थो पुरोहिओ जागरंतो कहेइ–'मज्जझरत्तिं जाव कत्थ तुम्हे थिया? अहुणा न उग्घाडिस्सं जत्थ उग्घाडिअद्दारं अत्थि, तत्थ गच्छेह' एवं कहिऊण मोणेण थिओ।

तया ते दुण्णि समीवत्थियाए तुरंगसालाए गया। तत्थ अत्थरणाभावे अइवसीयबाहिया तुरंगमपिट्ठच्छाइअवत्थं गहिऊण भूमीए सुत्ता। तया विजयरामेण चिंतिअं– 'एत्थ सावमाणं ठाउं न उइअं।' तओ सो मित्तं कहेइ– "हे मित्त! कत्थ अम्हं सुहसेज्जा? कत्थ य इमं भूलोट्ठणं?, अओ गमणं चिअ वरं"। सो मित्तो बोल्लेइ–"इआरिसदुहे वि परन्नं कत्थ? अहं तु एत्थ ठास्सं। तुमं गंतुमिच्छसि जइ, तया गच्छसु।" तओ सो पच्चूसे पुरोहिय समीवे गच्चा सिक्खं अणुण्णं च मग्गीअ। तया पुरोहिओ सुट्ठुत्ति कहेइ। एवं सो तइओ जामाया 'भूसज्जाए विजयरामो' वि निग्गओ।

अहुणा केवलं केसवो जामायरो तत्थ ठिओ संतो गंतुं नेच्छइ। पुरोहितो वि केसवजामाउणो निक्कासणत्थं जुत्तिं विआरिऊण नियपुत्तस्स किंचि वि कहिऊण गओ। जया केसवजामायरो भोयणत्थं उवविट्ठो, पुरोहिअस्स य पुत्तो समीवे वट्टइ, तया सो समागओ समाणो पुत्तं पुच्छइ–'वच्छ! एत्थ मए रूवगो मुक्को सो य केण गहिओ, सो कहेइ 'अहं न जाणामि। पुरोहिओ बोल्लेइ– 'तुमएच्चिय गहिओ असच्चावाइ! पाव! धिट्ठ! देहि मम तं, अन्नह तं मारइस्सं' ति कहिऊण से उवाणहं गहिऊण मारिउं धाविओ। पुत्तो वि मुट्ठिं बंधिऊण पिउस्स सम्मुहं गओ। दोण्णि ते जुज्झमाणे दट्ठूण केसवो ताणं मज्झे गंतूण 'मा जुज्झह मा जुज्झह' त्ति कहिऊण ठिओ। तया सो पुरोहिओ 'हे जामायरा! अवसरसु अवसरसु' त्ति कहिऊण तं उवाणहाए पहरेइ।

पुत्ते वि 'केसव! दूरीभव दूरीभव' त्ति कहिऊण मुट्ठीए तं केसवं पहरेइ। एवं पिअर-पुत्ता केसवं ताडिंति। तओ सो तेहिं धक्कामुक्केण ताडिज्जमाणो सिग्घं भग्गो। एवं 'धक्का मुक्केण केसवो' सो चउत्थो जामायरो अकहिऊण गओ।

तद्दिणे पुरोहिओ निवसहाए विलंबेण गओ। नरिंदो तं पुच्छइ– "किं विलंबेण तुमं आगओ सि।" सो कहेइ– विवाहमहूसवे जामायरा समागया। ते उ भोयणरसलुद्धा चिरं ठिआवि गतुं न इच्छंति। तओ जुत्तीए सव्वे निक्कासिआ। ते एवं–

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

"वज्जकुडेण मणीरामो, तिलतेल्लेण माहवो।
भूसज्जाए विजयरामो, धक्कामुक्केण केसवो॥"

तेण सव्वो वुत्तंतो नरिंदस्स अग्गे कहिओ। नरिंदो वि तस्स बुद्धीए अईव तुट्ठो। एवं जे भविआ कामभोगविसयमूढा सयं चिय कामभोगाइं न चएज्जा, ते एवंविहदुहाणं भायणं हुंति।

2.9.2 हिन्दी-भावार्थ

किसी ग्राम में राजा के राज्य में शांति स्थापित करने वाला पुरोहित रहता था। उसको एक पुत्र और पांच कन्याएँ थीं (कन्नगा)। उसके द्वारा चार कन्याएँ विज्ञ ब्राह्मण-पुत्रों के साथ विवाह करवा दी गई। कुछ समय पश्चात् पाँचवीं कन्या का विवाह-महोत्सव प्रारम्भ हुआ। विवाह में चारों दामाद आये। विवाह के पूर्ण होने पर दामादों के अलावा सब सम्बन्धी अपने-अपने घर चले गये। भोजन के लोभी दामाद अपने घरों को जाने के लिए इच्छुक नहीं थे। पुरोहित ने विचार किया– (ये) दामाद सास के अत्यन्त प्रिय हैं। इसलिए ये पांच छः दिन ठहरे (रुके) हैं, पीछे चले जायेंगे।

वे भोजन-रस लोभी दामाद बाद में भी जाने के लिए इच्छुक नहीं हुए। आपस में उन्होंने विचार किया- **ससुर का गृह मनुष्यों के लिए स्वर्गतुल्य होता है।** निश्चय ही यह सूक्ति सच्ची है। इसप्रकार विचारकर उनके द्वारा एक दीवार पर यह सूक्ति लिखी गई। एक बार इस सूक्ति को पढ़कर ससुर के द्वारा विचार किया गया– ये भोजनरस के लोभी दामाद कभी भी नहीं जायेंगे, अब इनको समझाया जाना चाहिए। इसप्रकार सोचकर उस श्लोक के चरण के नीचे उसके द्वारा तीन चरण लिखे गये–

विवेकीजन पाँच-छः दिन ही रहते हैं,
दही, घी एवं गुड़ का लोभी एक माह ठहरता है,
तो वह गधे के समान मनुष्य मानहीन ही होता है।

उन दामादों के द्वारा (यद्यपि) तीनों पाद पढ़े गए, तब भी भोजनरस के लालची होने के कारण उन्होंने जाने की इच्छा नहीं की। ससुर ने भी विचार किया– 'ये कैसे निकाले जाने चाहिए? स्वादिष्ट-भोजन में लीन ये गधे के समान मानहीन हैं, इसलिए (ये) युक्तिपूर्वक निकाले जाने चाहिए।' पुरोहित अपनी पत्नी से पूछता है– "(तुम) इन दामादों को भोजन के लिए क्या देती हो?" उसने कहा– "अतिप्रिय दामादों के लिए तीन बार दही, घी, गुड़ से मिश्रित अन्न और पकवान सदैव देती हूँ।" पुरोहित ने पत्नी से कहा– "आज के दिन से तुम्हारे द्वारा दामादों के लिए घी लगी हुई वज्रकूट की तरह मोटी रोटी दी जानी चाहिए।" पति की आज्ञा टाली नहीं जानी चाहिए। इस प्रकार विचारकर वह भोजन के समय उनके लिए मोटी रोटी घी लगी हुई देती है। उसको देखकर प्रथम मणीराम (नामक) दामाद ने मित्रों से कहा– "अब यहाँ रहना ठीक नहीं है। निज घर में इसकी अपेक्षा स्वादिष्ट भोजन है, इसलिए यहाँ से गमन ही उत्तम (है)। ससुर को प्रभात में कहकर मैं जाऊँगा।" उन्होंने (मित्रों ने) कहा– "हे मित्र! बिना मूल्य भोजन कहाँ है (इसलिए) यह कठोर की हुई रोटी स्वादवाली गिनकर खाई जानी चाहिए।" क्योंकि **लोक में दूसरे का भोजन दुर्लभ** है। यह कहावत तुम्हारे द्वारा क्या नहीं सुनी गई? तुम्हारी इच्छा है, तो जाओ, हमारे लिए ससुर कहेंगे, तो (हम) जायेंगे।" इसप्रकार मित्रों के वचन को सुनकर प्रभात में ससुर के आगे जाकर सीख और आज्ञा मांगी। ससुर भी उसको विदाई देकर 'फिर भी आना' इस प्रकार कहकर कुछ दूर तक पहुँचाकर जाने की आज्ञा दी। इसप्रकार प्रथम दामाद **मणीराम, बज्रकूट रोटी** से निकाल दिया गया।

(वह पुरोहित) फिर पत्नी को कहता है– अब दामादों के लिए तिल के तेल से युक्त रोटी दी जानी चाहिए। वह भोजन के समय दामादों के लिए तिल के तेल से युक्त रोटी देती है। उसको देखकर माधव नामक दामाद विचार करता है। घर में भी यह प्राप्त किया जाता है, इसलिए यहाँ से गमन सुखकारी है। मित्रों को भी वह कहता है– "मैं कल जाऊँगा, क्योंकि भोजन में (अब) तेल आ गया (है)।" तब उन मित्रों ने कहा– "हमारी सासु विदुषी है, क्योंकि ठंड में तिल का तेल ही उदर की अग्नि का उद्दीपक होने के कारण सुन्दर है, घी नहीं, इसलिए तेल देती हैं। हम सब तो यहाँ ठहरेंगे।" तब माधव नामक दामाद ससुर के पास जाकर सीख व अनुज्ञा मांगता है। तब ससुर ने "जाओ, जाओ" (कहा), इसप्रकार आज्ञा दी, विदाई नहीं दी। इस प्रकार तिल के तेल के कारण माधव नामक दूसरा दामाद चला गया।

तीसरे-चौथे दामाद फिर भी नहीं जाते हैं। किसप्रकार ये निकाले जाने चाहिए? इसके लिए विचार करके उपाय सोचा। ससुर पत्नी से पूछता है– "ये दामाद रात्रि में सोने के लिए घर कब आते हैं?" तब पत्नी ने कहा– "कभी रात्रि में एक पहर गये आते हैं, कभी दो-तीन पहर गये आते हैं।" पुरोहित ने कहा-"आज रात्रि में तुम्हारे द्वारा द्वार नहीं खोला जाना चाहिए। मैं जागूंगा।" वे दोनों दामाद सायंकाल ग्राम में मनोरंजन के लिए गए विविध क्रीडाएँ करते हुए और नाटक देखते हुए मध्यरात्रि में घर के द्वार पर आए। घर को बंद हुआ देखकर द्वार खोलने के लिए उन्होंने ऊँचे स्वर से पुकारा-"द्वार खोलो।" तब द्वार के समीप विस्तर पर स्थित जागते हुए पुरोहित ने कहा– "मध्यरात्रि में भी तुम कहाँ रुक गये। अब नहीं खोलूँगा। जहाँ द्वार खुला हो, वहाँ जाओ।" इसप्रकार कहकर वह चुप हो गया।

तब वे दोनों समीप में स्थित घुड़साल में गए। वहाँ बिस्तर के अभाव में अत्यन्त ठण्ड से पीड़ित घोड़े की पीठ पर ढँकने वाले वस्त्र (जीन) को ग्रहण करके भूमि पर सोए। तब विजयराम दामाद के द्वारा विचारा गया– "यहाँ अपमान-सहित ठहरने के लिए उचित नहीं है।" तब उसने मित्र को कहा– "हे मित्र! हमारी सुख-शय्या कहाँ? और कहाँ यह जमीन पर लेटना? अतः यहाँ से गमन ही श्रेष्ठ है।" उस मित्र ने कहा "ऐसे दुःख में भी दूसरे का अन्न कहाँ? मैं तो यहाँ ठहरूँगा। यदि तुम जाने की इच्छा रखते हो तो जाओ।" तब उसने प्रभात में पुरोहित के समीप जाकर सीख व अनुज्ञा माँगी। तब पुरोहित ने कहा, "अच्छा।" इस प्रकार वह तीसरा दामाद, **भूशय्यावाला विजयराम** भी निकाला गया।

अब केवल वहाँ ठहरा हुआ केशव दामाद जाने की इच्छा ही नहीं करता। पुरोहित भी केवल दामाद को निकालने के लिए युक्ति सोचता है। एक बार निज-पुत्र के कान में कुछ कहकर वह चला गया। जब केशव दामाद भोजन के लिए बैठा, तब पुरोहित का पुत्र भी समीप बैठा, तब वह पुरोहित आया (और) पुत्र को पूछा– "हे पुत्र! यहाँ मेरे द्वारा रुपया छोड़ा गया था, वह किसके द्वारा लिया गया है, हे असत्यवादी! हे पापी! हे ढीठ! वह रुपया मुझे दो। अन्यथा मैं तुमको मारूँगा।" इसप्रकार कहकर वह जूता लेकर मारने के लिए दौड़ा। पुत्र भी मुट्ठी को बाँधकर पिता के सम्मुख हो गया। उन दोनों को लड़ते हुए देखकर केशव उनके मध्य में जाकर "मत लड़ो, मत लड़ो" इसप्रकार कहकर खड़ा हो गया। तब वह पुरोहित, "हे दामाद! हटो, हटो" कहकर उसको जूते से पीटता है।

पुत्र भी "हे केशव! दूर हो, दूर हो" इसप्रकार कहकर मुट्ठी से उस केशव को पीटता है। इसप्रकार पिता-पुत्र दोनों केशव को मारते हैं। तब उसके द्वारा धक्का-मुक्की से ताड़ा जाता हुआ वह केशव शीघ्र भाग गया, इसप्रकार धक्का-मुक्की से केशव वह चौथा दामाद बिना कहे चला गया।

उस दिन पुरोहित राजसभा में देर से गया। राजा ने उससे पूछा ; तुम देर से

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

क्यों आए हो। उसने कहा– विवाह-महोत्सव में चार दामाद आए थे। वे भोजनरस के लोभी चिरकाल तक ठहरे और जाने की इच्छा नहीं करते थे। तब युक्तिपूर्वक वे सभी निकाले गये– **वज्रकूट-रोटी से मणीराम, तिलों के तेल से माधव, भूशय्या से विजयराम (और) धक्का-मुक्के से केशव।**

इसप्रकार उस पुरोहित द्वारा सभी वृतान्त राजा के सामने कहा गया। राजा भी उसकी बुद्धि से अत्यन्त संतुष्ट हुआ। इसलिए काम-भोग से आसक्त जो व्यक्ति स्वयं ही काम-भोगों को नहीं छोड़ता है, वह इसीप्रकार विभिन्न दु:खों का पात्र होता है।

बोध प्रश्न

28. पुरोहित के दामादों ने ससुर का गृह किसके तुल्य माना?

29. पुरोहित ने समझाने के लिए दामादों के लिए श्लोक के तीन चरण और क्या लिख दिए?

30. चारों दामाद अपने घर वापस किस तरह गए?

31. भोगों में पड़ा हुआ इंसान किस तरह दु:ख पाता है?

2.10 मूलदेव कहा (मूलदेव-कथा) परिचय

'मूलदेव कथा' नामक पाठ में आपाका स्वागत है। आप जानते हैं कि चोर बहुत ही होशियारी से अपना काम करते हैं। उन्हें पकड़ने के लिए और अधिक होशियारी की आवश्कता होती है। प्रस्तुत कथा में राजा वेश बदलकर चोर को पकड़ने का प्रयास करता है। राजा का कर्त्तव्य है कि वह समाज में हो रही बुराइयों का पता लगाए। इसलिए भले ही कोतवाल आदि नियुक्त हैं, लेकिन सफलता न मिलने पर उसका भी कर्तव्य है कि वह स्वयं पहल करे। इस कथा से यह पता चलता है कि पहले राजा स्वयं इसप्रकार का प्रयास करते थे।

2.10.1 मूल-पाठ

वेण्णायडे णयरे मंडिय णाम तुण्णाओ पद-दव्वहरणपसत्तो आसी। सो य दुट्ठ-गण्डो मि त्ति जणे पगासेंतो जाणु-देसेण निच्च एव अद्दावलेवलित्तेन बद्ध-वणपट्टो रायमग्गे तुण्णागसिप्पं उवजीवइ। चंकमंतो विय दण्डधरिएणं पाएणं किलिम्मंतो कहंचि चंकमइ। रत्ति च खत्तं खणिऊण दव्वजायं घेत्तूण नगरसण्णिहिए उज्जाणेग-देसे भूमिघरं तत्थ णिक्खिवइ। तत्थ य से भगिणी कण्णगा चिट्ठइ। तस्स भूमिधरस्स मज्झे कूबो। जं य सो चोरो दव्वेण पलोभेउं सहायं दव्ववोढारं आणेइ तं सा से भगिणी अगडसमीवे पुव्व-णत्थासणे णीवेसिउं पाय-सोय-लक्खेण पाए गेण्हिऊण तम्मि कूवए पक्खिवइ। तओ सो विवज्जइ।

एवं कालो वच्चइ णयरं मुसंतस्स। चोरग्गहा तं ण सक्केंति गेण्हिउं। तओ णयरे बहुरवो जाओ। तत्थ य मूलदेव राया पुव्वभणियविहाणेण जाओ। कहिअी य तस्स पउरेहिं तक्कर-वइयरो जहा-एत्थ णयरे पभूयकालो मुसंतस्स वट्टइ कस्सइ तक्करस्स। ण य तीरइ केणइ गेण्हिउं। ता करेउ किम्पि उवायं।

ताहे सो अन्नं नगररक्खियं ठवेइ। सो वि ण सक्कइ चोरं गेण्हिउं। ताहे मूलदेवो सयं नील-पडं पाउणिऊण रत्तं णिग्गतो। मूलदेवो अणज्जंतो एगाए सभाए णिवण्णो अच्छइ जाव सो मण्डिय-चोरी आगंतुं भणइ को एत्थ अच्छइ।

मूलदेवेण भणियं- अहं कप्पडिओ।
तेण भण्णइ- एहि मानुसं करेमि।

मूलदेव उट्ठिओ। एगम्मि इसर-घरे खत्तं खयं सुवहुं दव्वजायं णीणे उण मूलदेवस्स उवरिं चडावियं। पयट्टा णयरवाहिरियं। मूलदेवो पुरओ चोरो असिणा कड्ढिएण पिट्ठओ एइ। संपत्ता भूमिघरं। चोरो तं दब्बं णिहणिउं आरद्धो।

भणिया य णेण भगिणी–एसस्स पाहुणयस्स पायसोयं देहि।

ताए कूव-तडसण्णिविट्ठे आसने णिवेसिओ। ताए पायसोयलक्खेण पाओ गहिओ कूवे छुहामि त्ति। जाव अतीत-सुकुमारा पाया ताए णायं जहा एस कोइ अणुभूय-पुव्व रज्जो विहलियंगो। अणुकंपा जाया। तओ ताए पाय-तले सण्णिओ णस्स त्ति मा मारिज्जिहिसि त्ति। पच्छा सो पलाओ। तीए वोलो कओ णट्ठो णट्ठो त्ति। सो असिं कड्ढि मग्गे ओलग्गो।

मूलदेवो राय-पहे अइसन्निकिट्ठं णऊण चच्चरसिवंतरिओ ठिओ। चोरो तं सिवलिंग एसो पुरसो त्ति काउं कंकमएण असिणा दुहा-काउं वडिनियतो गओ भूमिघरं। तत्थ वसिऊण पहायाए रयणिए तओ निग्गन्तूण गओ बहिं। अन्तरावणे तुण्णगत्तं करेइ।

राइणा अब्भुट्ठाणेण पूइओ आसने निवेसाविओ सुवहु च पियं आभासिओ संलत्तो मम भगिहिं देहि त्ति।

तेण दिन्ना विवाहिया राइणा। भोगा य से संपदत्ता।
कइसुवि दिणेसु गएसु राइणा मण्डियो भणिओ–दव्वेण कज्जं त्ति।
तेण सुबहुं दव्वजायं दिण्णं। राइणा संपूजिओ।

अण्णया पुणो मग्गिओ पुणो वि दिण्णं।
तस्सो य चोरस्स अतीव सक्कारसम्माणं पउंज्जइ।

एएण पगारेण सव्वं दवाविओ। भगिणि से पुच्छइ।
तीए भण्णति- एत्तियं चेव वित्तं।

तओ पुव्वावेइय-लेक्खाणुसारेण सव्वं दव्वं
दवावेऊण मंडियो सूलाए आरोविणो।

2.10.2 हिन्दी-भावार्थ

'वेण्णातट' नगर में दूसरों के धन को चुराने में लगा हुआ 'माण्डिक' नाम का एक रफूगर रहता था। "वह दुष्ट फोड़ेवाला है" ऐसा लोगों में प्रकाशित करता हुआ घुटने तक गीले लेप से अवलिप्त, घाव पर पट्टी बाँधकर राजमार्ग पर रफूगरी का कर्म करता हुआ जी रहा था। लँगड़े की भाँति डण्डे के सहारे रखे जाते हुए पैर से लंगड़ाता हुआ किसी प्रकार चलता था। रात में गड्ढा खोदकर, द्रव्यसमूह को लेकर नगर के समीप स्थित उद्यान के एक ओर भूमि के नीचे बने घर में डाल देता था। वहाँ उसकी कर्णिका नाम की बहन बैठी रहती थी। उस भूमिगृह के बीच में कुँआ था। वह चोर द्रव्य के प्रलोभन से जिस सहायक द्रव्यवाहक को ले आता था, उसे उस चोर की बहन उस गड्ढे के समीप पहले से रखे गये आसन पर बैठने के लिए पैर धोने के बहाने से दोनों पैरों को पकड़कर उस कुएँ में छोड़ देती थी। तदनन्तर वह मर जाता था।

नगर को मूसते (चोरी करते हुए) इसप्रकार (उसका) समय बीत रहा था।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

चोर पकड़नेवाले उसे पकड़ने में समर्थ नहीं हो रहे थे। नगर में बहुत शोर था। उसके पुरवासियों ने तस्कर-प्रसङ्ग को (राजा से) कहा कि "बहुत समय से नगर में चोरी करते हुए कोई चोर रह रहा है। किसी के द्वारा पकड़ा नहीं जा रहा है। इसलिए कोई उपाय करें।"

तब उसने दूसरे नगर-रक्षक को स्थापित (नियुक्त) किया। वह भी चोर को पकड़ने में समर्थ नहीं हुआ। उसके बाद मूलदेव स्वयं नील वस्त्र से अपने (शरीर) को ढककर रात में निकल पड़ा। (कुछ भी) न जानते हुए मूलदेव एक सभा में बैठा था। इतने में उस माण्डिक चोर ने आगन्तुक से कहा–"यहाँ कौन है?" मूलदेव ने कहा–"मैं भिखमंगा हूँ।" उसने कहा–"आओ, आदमी करना है" (मजदूर की आवश्यकता है)। मूलदेव उठ खड़ा हुआ। एक धनी के घर में आकर रखे गये गड्ढे से अत्यधिक धन लेकर मूलदेव के ऊपर रख दिया। नगर के बाहर (वे दोनों) चल पड़े। मूलदेव आगे-आगे तथा तलवार निकालकर चोर पीछे-पीछे जा रहा था। भूमिगृह आ गया। चोर ने उस द्रव्य को रखना प्रारम्भ कर दिया। बहन से इसने कहा– "इस पाहुन (अतिथि) को पैर धोने के लिए जल दे दो।" उसने कूप के किनारे स्थित आसन पर उसे बैठा दिया। कुएँ में ढकेल दूँगा (ऐसा सोचकर) पैर धोने के बहाने उसके पैरों को पकड़ लिया। ज्योंही उसने 'ये अत्यन्त सुकुमार पैर हैं' ऐसा जाना, त्योंही, यह पूर्व-समय में राज्य का अनुभव करने वाला है, और इस समय पदच्युत हो गया है (ऐसा उसे ज्ञात हुआ)। उसकी अनुकम्पा जग गयी। तदनन्तर उसने उस (राजा) के पैर में इशारा कर दिया–"अदृश्य हो जाओ, अन्यथा मारे जाओगे।" बाद में वह भाग गया। उसने कहा–"वह अदृश्य हो रहा है", और वह अदृश्य हो गया। वह चोर तलवार निकालकर रास्ते में जा खड़ा हुआ।

मूलदेव सड़क पर उसे अत्यन्त नजदीक जानकर शिव के चबूतरे की आड़ में सो गया। चोर, यह पुरुष है, ऐसा समझकर कंकमय तलवार से उस शिवलिंग को दो टुकड़े कर, लौटकर भूमिगृह में चला गया। वहाँ रहकर प्रातःकाल वहाँ से निकलकर बाहर चला गया, बाजार में डाकिया का काम करने लगा।

नौकरों से राजा ने उसे बुलवाया, सोचा कि सम्भवतः वह पुरुष नहीं मारा जा सका है। अवश्य यह राजा होगा, तभी उन नौकरों के द्वारा वह लाया गया।

राजा ने उठकर उसका आदर किया, अपने आसन पर बिठाया, बहुत-सी प्रिय बातें कीं और बातचीत के प्रसंग में ही 'अपनी भगिनी दो' (ऐसा कहा)।

उसकी दी गयी भगिनी से राजा ने विवाह किया। भोग्य पदार्थों को भी उसने राजा को दे दिया। कुछ दिनों के बीतने पर राजा ने माण्डिक को कहा– "कुछ द्रव्य चाहिए।" उसने अकूत द्रव्यराशि दी। राजा के द्वारा वह आदृत हुआ। दूसरे समय फिर माँगने पर पुनः दिया। उस चोर का अत्यन्त सत्कार और सम्मान हुआ।

इसीप्रकार से सम्पूर्ण-द्रव्य राजा को दिया गया। (राजा ने) उसकी भगिनी से पूछा, उसने कहा–"इतना ही वित्त था।"

तदनन्तर पूर्वविदित लेखा के अनुसार सम्पूर्ण-द्रव्य लेकर माण्डिक को शूली पर चढ़ा दिया गया।

बोध प्रश्न

32. माण्डिक किसतरह अपना जीवनयापन करता था ?

33. मूलदेव ने किसतरह चोर को पकड़ा ?

34. माण्डिक की भगिनी के साथ क्या हुआ ?

35. बाजार में डाकिया का काम कौन करने लगा ?

2.11 सारांश

इस पाठ में प्राकृत-काव्य के महत्त्व को दर्शाया है। उसके अनन्तर कुलीन व्यक्ति, क्षमा, सहनशीलता आदि से सम्बद्ध नीतिपरक-उक्तियाँ हैं। नीतिपरक जीवनोपयोगी-सूक्तियाँ लाभप्रद होती हैं। इन सूक्तियों को जीवन में प्रयोग करने से व्यक्तित्व के सर्वांगीण-विकास में सहायता मिलती है। अधिकांश प्राकृत कथाओं में का मार्मिक विषय व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास, सामान्यजन और राजा आदि के सामाजिक जीवन में कोई भेद न करना आदि विषयों का विवेचन करना रहा है। इस कथा में बताया गया है कि शिष्ट और महापुरुषों का संसर्ग सुखकारी है, श्रेष्ठ लोगों की विलासिता के लिए संगीत को आवश्यक माना गया है। इस कथा में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि आलंकारिक प्रयोगों की बहुलता है। गाथासप्तशती बताया गया है कि लक्ष्मी किसे नहीं मिलती?, मित्र किसको बनाना चाहिए। सज्जन-पुरूषों का गुण क्या है?, दुर्जन कब मीठा बोलता है?, मणि की पहचान क्या है? मनस्वी का हृदय अंतिम-काल में भी उन्नत ही होता है। सज्जन पुरुष विपत्ति में उद्विग्न नहीं होते हैं, वैभवता में गर्व नहीं करते हैं और भय के समय धैर्यवान् होते हैं। मनुष्य लोक में निवास करने वाले अंधे और बहरे लोगों को अच्छा बताया गया है क्योंकि वह पिशुन वचनों को न सुन सकते हैं और न दुष्टों की समृद्धि को देखते हैं, आदि विषयों से सम्बन्धित सुक्तिपरक गाथाऐं इस पाठ में वर्णित हैं।

इस पाठ में भगवान् महावीर ने आनन्द के माध्यम से जीवन में होने वाले पाँच प्रकार के अतिचारों (दुर्व्यवहारों) को बताया है। सम्यक्त्व, प्राणियों के बुरे प्रयोगों के स्थूल अतिचारों, दिग्व्रत के पाँच अतिचारों को जानना चाहिए एवं उनका आचरण नहीं करना चाहिए। एक पाठ में महात्मा बुद्ध द्वारा समय-समय पर दिये गए उपदेशों का वर्णन है। तथागत प्रमादरहित जीवन व्यतीत करने के लिए कहते हैं। चित्त की रक्षा करने के लिए प्रमादरहित, स्मृतिशील, सुशील, एवं एकाग्रभाव से दृढ़ संकल्प होकर किया जा सकता है। महात्मा बुद्ध द्वारा प्रदत्त मानव-जीवन से जुड़े हुए सभी पक्षों का इन गाथाओं में स्वस्थ जीवन जीने के लिए उपदेश प्राप्त होते हैं।

इस पाठ में बतलाया गया है कि अमांगलिक पुरुष को कैसे फाँसी से बचाया गया। एक दिन जब राजा बुरे परिणाम के कारण एक व्यक्ति को फांसी की सजा देता है तब वह व्यक्ति भी राजा को जबाव देता है कि मेरे मुँह देखने से तो आपको मात्र भोजन नहीं मिला। लेकिन मैंने भी सबसे पहले आपका ही मुँह देखा था, मुझे तो फाँसी मिल गई है। अतः मुझसे ज्यादा आमंगालिक तो आप हुए। इस पर राजा को बात समझ में आ जाती है कि यह ठीक नहीं है और वह अमांगलिक पुरुष फाँसी से बच जाता है। चार दामादों के एक बार ससुराल आने एवं वापस न जाने का प्रसंग कथा के माध्यम से बताया गया है। माण्डिक चोर बहुरूपिये के रूप में रहकर चोरी करता है। राज्य में जब कोई उसे नहीं पकड़ पाया, तो राजा स्वयं प्रयास करता है कि चोर को पकड़ा जाय; तथा राजा चोर को पकड़ने में सफल होता है। तदनन्तर उसकी भगिनी से विवाह कर माण्डिक चोर की सारी सम्पत्ति प्राप्तकर उसको शूली पर चढा देता है।

2.12 शब्दावली

1. अमय – अमृत।
2. पाइय – प्राकृत।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

3.	सोउं	–	सुनकर।
4.	जायइ	–	उत्पन्न होती है।
5.	तित्तिं	–	तृप्ति।
6.	देसियसद्दपलोट्टं	–	देशी शब्दों से परिपूर्ण।
7.	दिढलोहसंखलाणं	–	सदृढ़ लौह-शृंखलाओं के।
8.	गव्वमुव्वहइ	–	गर्व नहीं करता।
9.	परमुहपलोइयाणं	–	दूसरों का मुख देखनेवालों को।
10.	पुहवी	–	पृथ्वी।
11.	महुमणस्स	–	मधुसूदन/विष्णु जी के।
12.	हलिआ	–	हलवाहा।
13.	संकरहरिबंभाणं	–	शंकर, विष्णु तथा ब्रह्मा।
14.	छेली	–	बकरी।
15.	कण्णाद्धारविहीणं	–	कर्णधाररहित।
16.	बोहित्थ	–	जहाज।
17.	देसआलम्मि	–	देश-काल में।
18.	परम्मुहं	–	पराङ्मुख।
19.	जिण्णम्मि	–	जीर्णता में पचते ही।
20.	समोणआइ	–	समानरूप से अवनत हो जाते हैं।
21.	विअक्खण	–	विलक्षण।
22.	वहे	–	वध।
23.	छविच्छेए	–	किसी अंग का विच्छेद।
24.	सहसाभक्खाणे	–	अचानक कुछ कह देना।
25.	सदार-मंत-भेए	–	अपनी पत्नी से विचार भेद।
26.	मोसोवएसे	–	असत्य बातों का उपदेश।
27.	अदिण्णादाणवेरमणस्स	–	चोरी से रुकने के लिए (अदत्तादान)।
28.	तेणाहडे	–	उसके द्वारा लाई गई (चोरी)।
29.	सदार-संतोसीए	–	स्वदार सन्तोषी।
30.	इच्छा-परिमाणस्स	–	इच्छा परिमाण के।
31.	दिसि-व्वयस्स	–	दिग्व्रत।
32.	खेत्त-वुड्ढी-सइ	–	दूसरे के क्षेत्र में बढ़ना।

33.	गरदितु	=	गर्हित।
34.	मिछदिढि	=	मिथ्यादृष्टि।
35.	बुध-शशणे	=	बुद्ध के शासन में।
36.	नडकर	=	नरकुल के घर को।
37.	कुञरु	=	हाथी।
38.	स्वदिमद	=	स्मृतिमन्त।
39.	भिक्षति	=	भिक्षा माँगने वाला।
40.	अणुरक्षध	=	अनुरक्षा करे।
41.	धम-विण	=	धर्मविनय।
42.	जदि-जत्शर	=	जातिसंसार।
43.	धरममु	=	धर्म में रमण करनेवाला।
44.	मेत्र-विहारी	=	मैत्रविहारी।
45.	धमु अणुस्वरो	=	धर्म का स्मरण करने वाला।
46.	शिल-वद-भजेध	=	शीलव्रत के साधन से।
47.	वट्टा	–	समाचार।
48.	हलबोलो	–	कोलाहल।
49.	केरिसफलमं	–	कैसे फलवाला।
50.	पारितोसिअं	–	पारितोषिक।
51.	खज्जरसलुद्ध	–	भोजनरस का लोभी।
52.	छव्वा	–	छह।
53.	खरसमाणा	–	गधे के समान।
54.	गेण्हिऊण	–	लेकर।
55.	कप्पडिओ	–	भिखमंगा।
56.	पायसोयं	–	पैर धोने के लिए।
57.	सिवलिंग	–	शिवलिंग।
58	सक्कारसम्माणं	–	सत्कार और सम्मान।

2.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. वज्जालग्गं-जयवल्लभ सूरी - पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी।
2. णाणपंचमी कहाओ - महेश्वरसूरि, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, भारतीय विद्याभवन मुम्बई।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

3. प्राकृत दीपिका – डॉ. सुदर्शन लाल जैन, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी।

4. उवासगदसाओ – आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर राजस्थान।

5. प्राकृत धम्मपद – डॉ. भागचन्द्र जैन, प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर।

6. पाइअविन्नाणकहा (प्राकृत-विज्ञान कथा), प्रेमसुमन जैन, संघी सीरीज, जयपुर।

7. चउजामायराणं कहा- पाइय-गज्ज-संगहो, प्रो. प्रेम सुमन जैन, प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर।

8. प्राकृत स्वयंशिक्षक- प्रेससुमन जैन, प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर।

2.14 सहायक ग्रन्थ

1. जैन साहित्य का इतिहास – डॉ. गुलाबचन्द्र जैन, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी।

2. प्राकृत भाषा एवं साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास – डॉ. नेमिचन्द शास्त्री, तारा पब्लिकेशन वाराणसी।

3. गाथासप्तशती – मथुरानाथ शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

4. प्राकृत साहित्य का इतिहास-डॉ. जगदीश चन्द्र जैन, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

5. पालि-प्राकृत-अपभ्रंश संग्रह- डॉ. आर.एन.मिश्र, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

6. जैन-आगम साहित्य मनन और मीमांसा – देवेन्द्र मुनि, आगम संस्थान, उदयपुर।

7. जैन-साहित्य का इतिहास – मध्य प्रदेश संस्कृति संस्थान, भोपाल।

8. पालि-प्राकृत काव्य – डॉ. रजनीश शुक्ल, न्यु भारतीय बुक कार्पोरेशन, नईदिल्ली

2.15 बोध-प्रश्न के उत्तर

1. प्राकृत-काव्य को अमृत माना गया है।

2. प्राकृत-काव्य की रचना करना अत्यन्त कठिन है, उसके बाद उसका प्रयोग करनेवाले और अधिक कठिन है; प्रयोग होने पर भी सुननेवाला अत्यन्त दुर्लभ है।

3. पृथ्वी दो प्रकार के पुरुषों को धारण करती है-

   (1) जिनकी मति उपकार में लगी है।

   (2) जो किए गए उपकार को नहीं भूलते।

4. पृथ्वी उन मनुष्यों से अलंकृत है, जो मनुष्य समर्थ होने पर भी क्षमा करता है, धनवान् होने पर भी गर्व नहीं धारण करता और जो विद्वान् होने पर भी विनम्र रहता है।

5. लक्ष्मी अनेक प्रकार से सत्पुरुषों के व्यवसाय रूपी सागर में निवास करती है।

6. चक्रवर्ती राजा भी एकपत्नीक ही श्रेष्ठ है।

7. पति को प्रिय नहीं है, तो वह स्त्री बकरी के समान है।

8. प्रत्येक समय जो मनुष्य समभाव पूर्वक रहता है, वह देवताओं का भी पूज्य है।

9. शिष्टों और महापुरुषों से रहित राज्य, कर्णधार-रहित जहाज के समान है, जो डोलता है।

10. श्रेष्ठ स्त्री और संगीत से जो आकर्षित नहीं होता, वह पशु या देवता है।

11. कार्य को आरंभ करनेवाले को निश्चय ही लक्ष्मी मिलती है।

12. मित्र उसको बनाना चाहिए, जो किसी भी देश में, किसी भी काल में और किसी भी आपत्ति में कभी भी दीवाल पर चित्रित चित्र के समान पराङ्मुख न हो।

13. सज्जनों के हृदय विशाल-तरुओं के शिखरों की भाँति फल-सम्पत्ति के आने पर नम्र हो जाते हैं, फल-विपत्ति पर (वैभव नष्ट होने पर) अत्युच्च हो जाते हैं।

14. मनुष्यलोक में अन्धे और बहरे लोग धन्य हैं, वे ही वास्तव में जीवित हैं। क्योंकि वे न तो पिशुनों के वचन सुनते हैं और न दुष्टों की समृद्धि को देखते हैं।

15. श्रमणोपासक को सम्यक्त्व के पाँच प्रकार के बुरे आचरण-शंका, कांक्षा विचिकित्सा, दूसरे धर्म को माननेवाले की प्रशंसा तथा दूसरे धर्म को माननेवालों के साथ निकटता का सम्बन्ध को जानना चाहिए तथा उसका आचरण नहीं करना चाहिए।

16. अहिंसाणुव्रत के पाँच अतिचार हैं- बन्ध, वध, अतिभार, भोजन एवं पानी न देना।

17. स्थूल-चोरी के पाँच अतिचार हैं- चोरी के द्वारा लाई गई वस्तु को स्वीकार करना, चोरी करवाना, विरुद्ध राज्य का अतिक्रमण, गलत तराजू और गलत बाट तथा मिलावट के द्वारा अशुद्ध वस्तु का शुद्ध वस्तु के रूप में व्यवहार।

18. स्वदार-संतोषी-व्रत के पाँच अतिचार- चंचल किन्तु परिगृहीता स्त्री के पास गमन, अपरिगृहीता स्त्री के पास गमन, अनंग क्रीड़ा, दूसरे अपरिचित का विवाह कराना, काम एवं भोग में तीव्र अभिलाषा।

19. दिग्व्रत में ऊर्ध्वदिशा के प्रमाण का अतिक्रमण, अधोदिशा के प्रमाण का अतिक्रमण, तिरछी दिशा के प्रमाण का अतिक्रमण, रहने के स्थान पर दूसरे के क्षेत्र में बढ़ना एवं स्मृतिनाश– ये पाँच अतिचार बताए गए हैं।

20. जो पहले प्रमाद करता है, पर बाद में प्रमाद नहीं करता है, वह बादलों से मुक्त सूर्य की तरह इस लोक को प्रकाशित करता है।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

21. प्रमादरहित होकर, स्मृतिशील होकर, सुशील होकर, एकाग्रभाव से दृढ़ संकल्प होकर, अपने चित्त की रक्षा करनी चाहिए। योग-क्षेम के लिए कुशल धर्म-सेवी होना चाहिए।

22. अपने लाभ को सब कुछ माननेवाला तथा दूसरों से स्पृहा करनेवाला भिक्षु कभी समाधि को प्राप्त नहीं कर सकता।

23. जो पाप छोड़कर व्रतशील और ब्रह्मचर्यवान् होता है तथा इस लोक में ज्ञानपूर्वक आचरण करता है, वही 'भिक्षु' कहलाता है।

24. जिस पुरुष के दर्शन मात्र से कोई अशुभ काम हो जाय, उसे अमांगलिक पुरुष कहते हैं।

25. अमांगलिक पुरुष के बारे में सुनकर राजा ने उसे अपने पास बुलाया। उसका मुख देखकर राजा ज्योंहि भोजन के लिए बैठा, त्योंहि समस्त नगर में अकस्मात शत्रु के द्वारा आक्रमण के भय से शोरगुल होने लागा। राजा ने सोचा इस अमांगलिक पुरुष के दर्शन के कारण ही ऐसा हुआ।

25. अमांगलिक पुरुष को राजा ने फाँसी की सजा सुनवाई।

27. एक बुद्धिमान व्यक्ति के द्वारा आमंगलिक पुरुष को रोता देखकर बुद्धिमान व्यक्ति ने युक्ति बतलाई कि राजा को अन्तिम-दर्शन के लिए बुलाना तथा कहना कि कौन बड़ा आमंगलिक है, मैं कि तू ? आपका तो मात्र भोजन छूटा, मुझे तो फाँसी मिल रही है। तब राजा के समझ में आया कि इससे तो समाज में मैं ही ज्यादा आमंगलिक जाना जाऊँगा।

28. पुरोहित के दामादों ने ससुर का गृह स्वर्ग के समान माना।

29. विवेकीजन पाँच-छः दिन ही रहते हैं।

दही, घी, गुड़ का लोभी एक माह ठहरता है, नहीं तो वह गधे के समान मनुष्य मानहीन ही होता है।

30. वज्रकूट रोटी से मणीराम, तिलों के तेल से माधव,

भू शैय्या से विजयराम और धक्का-मुक्की से केशव।

इसप्रकार चारों दामाद अपने-अपने घर वापस चले गये।

31. जो भोगों में पड़ा रहता है वह चार दामादों के समान दुःख पाता है।

32. माण्डिक बहुरुपिए का वेश धारणकर जीवनयापन करता था।

33. मूलदेव ने वेष बदलकर चोर के सहायक के रूप में काम किया, तब चोर को पकड़ पाया।

34. माण्डिक की भगिनी ने जब राजा के पैर धोए, तब वह समझ गई कि यह अवश्य ही राजा रहा होगा। अतः उसे भागने में सहायता की।

35. बाजार में डाकिया का काम मूलदेव करने लगा।

2.16 अभ्यास के प्रश्न

(1) प्राकृत-साहित्य में मुक्तक-काव्य का महत्व लिखिए।

.....

.....

.....

.....

(2) विदग्ध-लोगों द्वारा कहे गए प्राकृत-काव्य की तृप्ति किससे हो सकती है?

.....

.....

.....

.....

(3) पठित-भाग में किन नीतिपरक बातों का विवेचन किया गया है, लिखें ?

.....

.....

.....

.....

(4) मनस्वी-लोगों की अंतिम-अवस्था कैसी होती है ?

.....

.....

.....

.....

5. ज्ञानपंचमी क्या है?

.....

.....

.....

.....

6. ज्ञानपंचमीकथा का क्या उद्देश्य है?

.....

.....

.....

.....

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

7. प्राकृत-कथा-साहित्य का संक्षिप्त-परिचय लिखिए।

.....

.....

.....

.....

8. ज्ञानपंचमीकथा में किन अलंकारों का अधिक प्रयोग हुआ है?

.....

.....

.....

.....

9. सज्जन-व्यक्ति का व्यवहार कैसा होना चाहिए? अपना मत प्रकट करें।

.....

.....

.....

.....

10. धन, मित्र, रूप तथा विज्ञान किस तरह का होना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

11. अकुलीन कब तक ध्वनि करता है?

.....

.....

.....

.....

12. मनस्वी का हृदय कब तक उन्नत रहता है? विवेचन करें।

.....

.....

.....

.....

13. मरकतमणि का कौन मूल्यांकन नहीं कर सका और क्यों?

.....

.....

.....

.....

14. प्राकृत आगम-परम्परा के विकासयात्रा पर संक्षिप्त-निबंध लिखें।

.....

.....

.....

.....

15. असत्य बोलने से हटने के पाँच अतिचार/दुर्व्यवहार बताइये?

.....

.....

.....

.....

16. इच्छा-परिमाण-अतिक्रमण को बताइये?

.....

.....

.....

.....

17. सम्यक्त्व के पाँच बुरे आचरण कौन-कौन हैं?

.....

.....

.....

.....

18. 'दिग्व्रत' में पाँच अतिचार कौन-कौन बतलाए गये हैं? विवेचन करें।

.....

.....

.....

.....

19. अप्रमाद और प्रमाद क्या है?

.....

.....

.....

.....

20. भिक्षु को क्या-क्या नहीं करना चाहिए?

.....

.....

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

.....

.....

21. भिक्षु को क्या बनने के लिए कहा है?

.....

.....

.....

.....

22. पाठ के अनुरूप भिक्षु कैसा होना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

23. 'अमंगलियपुरिस्स कहा' का संदेश क्या है?

.....

.....

.....

.....

24. संकट के समय हमें किसप्रकार अपनी रक्षा करनी चाहिए?

.....

.....

.....

25. अमांगलिक-कथा में प्रयुक्त प्राकृत की विशेषताएं लिखिए।

.....

.....

.....

.....

26. अमांगलिक पुरुष की जान कैसे बची?

.....

.....

.....

.....

27. प्राकृत-कथा के कितने प्रकार हैं?

.....

.....

.....

.....

28. कथा में आगत सूक्तियों का महत्त्व लिखिए।

.....

.....

.....

.....

29. इस कथा से जनसामान्य को क्या शिक्षा मिलती है?

.....

.....

.....

.....

30. चारों दामादों की मनोवृत्तियों को अपने शब्दों में लिखें।

.....

.....

.....

.....

31. कथा के आधार पर माण्डिक का चरित्र-चित्रण करें।

.....

.....

.....

.....

32. राजा का कथानक क्या है?

.....

.....

.....

.....

33. चोर की भगिनी का वृत्तान्त लिखिए।

.....

.....

.....

.....

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

34. इस कथा से हमें क्या शिक्षा मिलती है? लिखिए।

.....

.....

.....

.....

तृतीय पाठ (Unit - III)

संस्कृत-नाटकों में प्रयुक्त प्राकृतें

पाठ-संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्यम्
3.3 स्वप्नवासवदत्तम् परिचय
3.3.1 मूल-पाठ
3.3.2 हिन्दी-भावार्थ
बोधप्रश्न
3.4 अभिज्ञानशाकुन्तलम्
परिचय
3.4.1 मूल-पाठ
3.4.2 हिन्दी-भावार्थ
बोधप्रश्न
3.5 सारांश:
3.6 शब्दावली
3.7 बोधप्रश्नों के उत्तर
3.8 सन्दर्भ-ग्रन्थ
3.9 सहायकग्रन्थ
3.10 अभ्यासप्रश्न

3.1 प्रस्तावना

संस्कृत नाटकों में प्रयुक्त प्राकृतों के विषय में इस पाठ में पढ़ेंगे। आप जानते हैं कि कुछ संस्कृत-नाटकों में स्त्रीपात्र एवं सामान्यजन प्राकृत का प्रयोग करते हैं। इसमें प्रमुखरूप से अश्वघोष, भास, कालिदास और शूद्रक आदि के नाटक प्रसिद्ध हैं। भासरचित **स्वप्नवासवदत्तम्** एवं अभिज्ञानशाकुन्तलं नाटक में प्रयुक्त प्राकृत तथा कथानक का बोध हो सके। यह नाटक सभी नाटकों में श्रेष्ठ माना गया है। इन्हीं नाटकों का प्राकृत-अंश यहाँ प्रस्तुत हैं। नाटक सामान्य जन के लिए लिखे जाते थे। कथानकों के मध्य जो वार्तालाप चलती है, उनमें जनभावना निहित रहती है।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत-पाठ के अध्ययन से आप–

- संस्कृत-नाटकों में प्रयुक्त प्राकृत को समझने में सहायता मिलेगी।
- कालिदास के प्राकृत-प्रयोगों की विशेषता का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।
- कालिदास के 'अभिज्ञान-शाकुन्तलम्' नाटक की विशेषताओं की जानकारी हो सकेगी।
- विदूषक के मनोविनोदी स्वभाव से परिचित होंगे।
- काव्य में प्रयुक्त प्राकृतों के प्रयोग से अवगत हो सकेंगे।
- भास की नाट्यकला से परिचित हो पायेंगे।

3.3 स्वप्नवासवदत्त

3.3.1 मूलपाठ

[ततः प्रविशति विदूषकः]

विदूषक–[सहर्षम्] भो! दिट्ठिआ तत्तहोदो वच्छराअस्स अभिप्पेद-विवाहमंगलरमणिज्जो कालो दिट्ठो। भो! को णाम एदं जाणादि–तादिसे वयं अणत्थसलिलावत्ते पक्खित्ता उण उम्मज्जिस्सामो'त्ति। इदाणिं पासादेसु असीअदि, अंदेउरदिग्घिआसु ण्हाईअदि, पकिदिमउरसुउमाराणि मोदअखज्जीआणि खज्जीअंति त्ति अणच्छरसंवासो उत्तरकुरुवासो मए अणुभवीअदि। एक्को खु महंतो दोसो, मम आहारो सुट्ठुण परिणमदि, सुप्पच्छदणाए सय्याए णिहं णं लभामि, जह वादसोणिदं अभिदो विअ वत्तदि त्ति पेक्खामि। भो! सुहं णाम अपरिभूदं अकल्लवत्तं च।

[ततः प्रविशति चेटी]

चेटी–कहिं णु खु गदो अय्यवसंतओ? [परिक्रम्यावलोक्य] अम्हो! एसो अय्यवसंतओ। [उपगम्य] अय्य! वसंतअ! को कालो तुमं अण्णेसामि।

विदूषक– [दृष्ट्वा] किं णिमित्तं भद्दे! मं अण्णेससि?

चेटी– अम्हाणं भट्टिणी भणदि-अवि ह्लादो जामादुओ त्ति।

विदूषक– किं णिमित्तं भोदि पुच्छदि।

चेटी– किमण्णं। सुमणोवण्णअं आणेमि त्ति।

विदूषक– ह्लादो तत्तभवं। सव्वं आणेदु भोदी वज्जिअ भोअणं।

चेटी– किणिमित्तं वारेसि भोअणं?

विदूषक– अघण्णस्स मम कोइलाणं अक्खिवरिवट्टो विअ कुक्खि- परिवट्टो संवुत्तो।

चेटी- इदिसो एव्व होहि।

विदूषक– गच्छदु भोदी। जाव अहं वि तत्तहोदो सआसं गच्छमि।

[निष्क्रान्तौ]
॥ इति प्रवेशकः॥

[ततः प्रविशति सपरिवारा पद्मावती आवंतिकावेषधारिणी वासवदत्ता च।]

चेटी–किण्णिमित्तं भट्टिदारिआ पमदवणं आअदा?

पद्मावती–हला! ताणि दाव सेहालिआगुम्हआणि पेक्खामि कुसुमिदाणि वा ण वेत्ति।

चेटी–भट्टिदारिए! ताणि कुसुमिदाणि णाम, पवालंतरिदेहिं विअ मोत्तिआलम्बएहिं आइदाणि कुसुमेहिं।

पद्मावती–हला! जदि एव्वं, किं दाणिं विलंबेसि?

चेटी–तेण हि इमस्सिं सिलावट्ठए मुहुत्तणं उपविसदु भट्टिदारिआ। जाव अहं वि कुसुमावचअं करोमि।

पद्मावती–अय्ये! किं एत्थ उपविसामो?

वासवदत्ता–एव्वं होदु।

[उभे उपविशत:]

चेटी–[तथा कृत्वा], पेक्खदु पेक्खदु भट्टिदारिआ अद्धमणसिला- वट्टएहिं विअ सेहालिआकुसुमेहि पूरिअं मे अंजलिं।

पद्मावती–[दृष्ट्वा] अहो! विइत्तदा कुसुमाणं। पेक्खदु पेक्खदु अय्या।

वासवदत्ता–अहा! दस्सणीअदा कुसुमाणं।

चेटी–भट्टिदारिए! किं भूयो अवइणुस्सं?

पद्मावती–हला! मा मा भूयो अवइणिअ।

वासवदत्ता–हला! किंणिमित्तं वारेसि?

पद्मावती–अय्यउत्तो इह आअच्छिअ इमं कुसुमसमिद्धिं पेक्खिस्ससि सम्माणिदा भवेअं।

वासवदत्ता–हला! पिओ दे भत्ता?

पद्मावती–अय्ये! ण जाणामि, अय्यउत्तेण विरहिदा उक्कण्ठिदा होमि।

वासवदत्ता–[आत्मगतम्] दुक्खरं खु अहं करेमि। इअं वि णाम एव्वं मंतेदि।

चेटी–अभिजादं खु भट्टिदारिआए मंतिदं-पिओ मे भत्तेति।

पद्मावती–एक्को खु मे संदेहो।

वासवदत्ता–किं किं?

पद्मावती–जह मम अय्यउत्तो, तह एव्व अय्याए वासवदत्ताए त्ति?

वासवदत्ता–अदो वि अहिअं!

पद्मावती–कहं तुवं जाणासि?

वासवदत्ता– (आत्मगतम्) हं, अय्यउत्तपक्खवादेण अदिक्कंदो समुदाआरो। एव्वं दाव भणिस्सं (प्रकाशम्) जइ अप्पो सिणेहो, सा सजणं ण परित्तजदि।

पद्मावती– होदव्वं।

चेटो–भट्टिदारिए। साहु भत्तारं भणहि-अहं पि वीणं सिक्खिस्सामि त्ति।

पद्मावती–उत्तो मए अय्यउत्तो।

वासवदत्ता–तदो कि भणिदं?

पद्मावती–अभणिअ किचिं दिग्घं णिस्ससिअ तुण्हीओ संवुत्तो।

वासवदत्ता–तदो तुवं किं विअ तक्केसि?

पद्मावती– तक्केमि अय्याए वासवदत्ताए गुणाणि सुमरिअ दक्खिणदाए मम अग्गदो ण रोदिदि त्ति।

वासवदत्ता– [आत्मगतम्] धण्णा खु म्हि, जदि एव्वं सच्चं भवे।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

[ततः प्रविशति राजा विदूषकश्च]

विदूषक–ही! ही! पचिअपडिअबंधुजीवकुसुमविरलवादरमणिज्जं पमदवणं। इदो दाव भवं।

3.3.2 हिन्दी-भावार्थ

[विदूषक प्रवेश करता है]

विदूषक–[सहर्ष] अहो! भाग्य से पूज्य वत्सराज के अभिमत विवाह-मंगल से रमणीय समय देखा। ओह! भला कौन यह जानता था कि जलावर्त जैसे अनर्थ में पड़कर भी फिर हम उबरेंगे। इस समय महलों में रहते हैं, अन्तःपुर की बावलियों में नहाते हैं, प्रकृति-मधुर सुन्दर लड्डू खाते हैं। इस प्रकार से बिना अप्सराओं के साथ के भी उत्तरकुरूवास का अनुभव कर रहा हूँ। परन्तु बड़ा दोष है कि मेरा खाना ठीक से पचता नहीं, भलीभांति बिछायी गयी आस्तरण से युक्त बिस्तर पर भी नींद नहीं आती। ऐसा प्रतीत होता है कि सब ओर से वातरक्त घेरे हुए हैं। सुख वह है कि कलेवा मिलने में बाधा न हो।

चेटी–कहाँ चले गये आर्य वसन्तक? (घूमकर देखती है) ओह! यह रहे आर्य वसन्तक! [समीप जाकर] आर्य वसन्तक! कितने समय से आपको खोज रही हूँ।

विदूषक–(देखकर) भद्रे? किसलिए ढूँढ रही तुम मुझे

चेटी–हमारी स्वामिनी (महारानी) पूछती हैं कि आर्य स्नान कर चुके क्या?

विदूषक–किसलिए पूछती हैं देवी!

चेटी–दूसरा क्या? फूल आदि ले आऊँ यही।

विदूषक–वे नहा चुके। सब ले आओ, खाना छोड़कर।

चेटी–भोजन क्यों मना करता है?

विदूषक–कोयलों की आँखों के परिवर्तन के समान ही मुझ अभागे का पेट उलट गया है

चेटी–ऐसे ही बने रहो।

विदूषक–जाइये आप! तब तक मैं भी महाराज के पास जाता हूँ।

[दोनों निकल जाते हैं]

॥ प्रवेशक समाप्त॥

[अब परिजनों सहित 'पद्मावती' और 'अवन्तिका' के वेष में वासवदत्ता प्रवेश करती है]

चेटी–स्वामिपुत्रि! अन्तःपुर के उपवन में किसलिए आयी हैं?

पद्मावती–सखि! उन्हीं शेफाली-कुंजों को देखूँगी कि वे फूले या नहीं।

चेटी–तो स्वामिपुत्रि! इस शिलापट्ट पर क्षणभर बैठें। जब तक मैं फूल चुन लूँ।

पद्मावती–आर्ये! क्या यहाँ बैठा जाय?

वासवदत्ता–ऐसा ही करें।

[दोनों बैठती हैं]

चेटी–वैसा करके देखिए स्वामिपुत्रि! देखिए, मनसिल के छोटे-छोटे टुकड़ों की तरह शेफाली-पुष्पों से मेरी अंजलि भर गयी।

पद्मावती–[देखकर] अहा, फूलों की विविधता? देखें आर्या, देखें।

वासवदत्ता–अहो! देखने लायक फूल है।

चेटी–स्वामिपुत्रि! क्या फूलों को पुनः चुनूँ?

पद्मावती–मत चुनो सखी, मत चुनो।

वासवदत्ता–मना क्यों करती हो सखि?

पद्मावती–आर्यपुत्र यहाँ आकर और फूलों का वैभव देखेंगे, तो सम्मानित होऊँगी।

वासवदत्ता–सखि! तुम्हें स्वामी प्रिय हैं?

पद्मावती–नहीं जानती, परन्तु आर्यपुत्र से अलग होकर उत्कण्ठित हो जाती हूँ।

वासवदत्ता–(मन में) मैं दुष्कर काम कर रही हूँ। यह भी ऐसा ही कहती है।

चेटी–कुलीनता से ही स्वामिपुत्री ने कहा कि मुझे स्वामी प्रिय हैं।

पद्मावती–मुझे एक सन्देह है।

वासवदत्ता–क्या? क्या??

पद्मावती–जैसे आर्यपुत्र मेरे (प्रिय) हैं, वैसे ही आर्या वासवदत्ता के भी हैं (क्या)?

वासवदत्ता–उससे भी अधिक।

पद्मावती–तुम कैसे जानती हो?

वासवदत्ता–[स्वगत] हूँ, आर्यपुत्र के पक्षपात के कारण मुझसे व्यवहार का उल्लंघन हो गया। ठीक है, ऐसा कहती हूँ। [प्रकाश] अगर थोड़ा स्नेह होता तो वह स्वजनों को छोड़ती नहीं।

पद्मावती–हो सकता है।

चेटी–भर्तृदारिके! स्वामी से कहें–मैं भी वीणा सीखूँगी।

पद्मावती–मैंने आर्यपुत्र से कहा था।

वासवदत्ता–तो क्या कहा (उन्होंने)?

पद्मावती–कुछ न कहकर, लम्बी साँस छोड़कर, चुप रह गये!

वासवदत्ता–तो तुम क्या अनुमान करती हो?

पद्मावती–अनुमान करती हूँ कि आर्या वासवदत्ता के गुणों को यादकर दाक्षिण्य के कारण मेरे आगे रोते नहीं!

वासवदत्ता–[स्वगत] धन्य हूँ मैं, अगर यह सच हो।

[राजा और विदूषक प्रवेश करते हैं]

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

विदूषक–ओ हो! बिछे पड़े बन्धुजीव-पुष्पोंवाला एवं विरल पवनवाला यह प्रमदवन रमणीय है। इधर आयें आप।

बोध प्रश्न

1. अन्त:पुर के उपवन में वासवदत्ता का प्रवेश किसलिए होता है ?
2. पद्मावती फूल चुनने से क्यों मना करती है ?
3. चेटी स्वामी से क्या सीखने के लिए कहती है?
4. प्रस्तुत-पाठ में विदुषक कौन-सी प्राकृत का प्रयोग करता है?
5. स्वजनों को कौन नहीं छोड़ता है?

3.4 अभिज्ञानशाकुन्तलम् परिचय

'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' पाठ में आपका स्वागत है। आप जानते हैं कि कालिदास विरचित 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' प्रसिद्ध संस्कृत-नाटक है। इसमें स्त्रीपात्र एवं सामान्यजन प्राकृत में बोलते हैं। इसका महत्त्वपूर्ण-अंश यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

3.4.1 मूल-पाठ

(ततः प्रविशति नागरिकः, श्यालः पश्चाद् बद्धपुरुषमादाय रक्षिणौ च।)

रक्षिणौ–अले कुंभीलओ, कहेहि कहि तुए एशे मणिबंधणुक्किण्णणामहेए लाअकीअए अंगुलीअए शमाशादिए।

पुरुष–(भीतिनाटितकेन) पशीदंतु भावमिश्शे। हगे ण ईदिशकम्मकाली।

प्रथम–किं शोहणे बम्हणेत्ति कलिअ रण्णा पडिग्गहे दिण्णे।

पुरुष–शुणुध दाणिं। हगे शक्कावदालब्भंतरालवाशी धीवले।

द्वितीय–पाडच्चला, किं अम्हेहि जादी पुच्छिदा।

श्यालः–सूअअ, कहेदु शव्वं अणुक्कमेण। मा णं अंतरा पडिबंधाह।

उभौ–जं आवुत्ते आणवेदि कहेहि।

पुरुषः–अहके जालुग्गालादिहिं मच्छबंधणोवाएहिं कुडुम्बभलणं कलेमि।

श्यालः–(विहस्य) विसुद्धो दाणिं आजीवो।

पुरुषः–भट्टा मा, एव्वं भण-

शहज किल जे विणिंदिए ण हु दे कम्म विजज्जणीअए।
पशुमालण-कम्मदालुणे अणुकंपामिदु एव्व शोत्तिए ॥ 1॥

श्यालः– तदो तदो।

पुरुषः– एकश्शिं दिअशं खंडशो लोहिअमच्छे मए कप्पिदे जाव। तश्श उदलब्भंतले एदं लदणभाशुलं अंगुलीअअं देक्खिअ पच्छा अहके शे विक्कआअ दंशअंते गहिदे भावमिश्शेहिं। मालेह वा मुंचेह वा। अअं शे आअमवुत्तंते।

श्यालः–जाणुअ! विस्सगंधी गोहादी मच्छबंधो एव्व णिस्संअअं। अंगुलीअदंसणं से विमरिसिदव्वं। राअउलं एव्व गच्छामो।

रक्षिणो--तह गच्छ अले गंडभेदअ।

(सर्वे परिक्रामन्ति)

श्यालः–सूअअ, इमं गोपुरदुआरे अप्पमत्ता पडिवालह जाव इमं अंगुलीअअं जहागमणं भट्टिणो णिवेदिअ तदो सासणं पडिच्छिअ णिक्कमामि।

उभौ–पविशदु आवुत्ते शामिपशादश्श।

(इति निष्क्रान्तः श्यालः)

प्रथमः–जाणुअ, चिलाअदि क्खु आवुत्ते।

द्वितीयः–णं अवशलोवशप्पणीआ लाआणो।

प्रथमः–जाणुअ, फुल्लंति मे हत्था इमश्श वहश्श शुमणा पिणद्धुं।

(इति पुरुषं निर्दिशति)

पुरुषः– अलुहदि भावे अकालणमालणं भविदुं।

द्वितीयः–(विलोक्य) एशे अम्हाणं शामी पत्तहत्थे लाअशाशणं पडिच्छिअ इदोमुहे देखीअदि। गिद्धबली भविश्शशि, शुणो मुहं वा देक्खिअश्शशि।

(प्रविश्य)

श्यालः–सूअअ! मुंचेदु एसो जालोअजीवी। उववण्णो क्खु से अंगुलीअअस्स आअमो।

सूचकः–जह आवुत्ते भणादि।

द्वितीया–एशे जमशदणं पविशिअ पडिणिवुत्ते।

(इति पुरुषं परिमुक्तबन्धनं करोति।)

पुरुषः–(श्यालं प्रणम्य) भट्टा, अह कीलिशे मे आजीवे।

श्यालः–एसो भट्टिणा अंगुलीअअमुल्लसम्मिदो पसादो वि दाविदो।

(इति पुरुषाय स्वं प्रयच्छति)

पुरुषः–(सप्रणाम प्रतिगृह्य) भट्टा, अणुग्गहिदम्हि।

सूचकः–एशं णाम अणुग्गहे जे शूलादो अवदालिअ हत्थिक्कंधे पडिट्ठाविदे।

जानुकः–आवुत्त, पालिदोशिअं कहेदि, तेण अंगुलीअएण भट्टिणो शम्मदेण होदव्वं।

श्यालः– ण तस्सिं महारुहं रदणं भट्टिणो बहुमदं त्ति तक्केमि तस्स दंसणेण भट्टिणो अभिमदो जणो सुमराविदो। मुहुत्तअं पकिदि-गंभीरो वि पज्जस्सुणआसीं।

सूचक– शंविदं गाम आवुत्तेण।

जानुकः–भणाहि। इमश्श कए मच्छिआभत्तुणो त्ति।

(इति पुरुषमसूयया पश्यति)

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

पुरुषः–भट्टालक, इदो अद्धं तुम्हाणं शुमणो मुल्लं होदु।

जानुकः– एत्तके जुज्जइ।

श्याल–धीवर, महत्तरो तुमं पिअवअस्सओ दाणिं मे संवुत्तो। कादंबरीसक्खिअं अम्हाणं पढमसोहिदं इच्छीअदि। ता सोंडिआपणं एव्व गच्छंतो।

(इति निष्क्रान्ता सर्वे)

।। इति प्रवेशकः।।

3.4.2 हिन्दी-भावार्थ

(तदनन्तर राजा के साले कोतवाल और उसके पीछे बेड़ी से बँधे हुए एक पुरुष को लिये हुए दो रक्षकों का प्रवेश)।

दोनों सिपाही–(पीटकर) हे कुम्भरीक! बोल, तुमने राजा के नाम से अंकित यह मणि लगी हुई अँगूठी कहाँ पायी?

पुरुष–(भय का अभिनय करते हुए) महाशय! क्षमा करें। मैं ऐसा काम नहीं किया करता।

प्रथम सिपाही–क्या तुम कोई कुलीन ब्राह्मण हो कि राजा ने दक्षिणा दी थी?

पुरुष–तनिक सुनने की कृपा तो करो। मैं शक्रावतार गाँव का रहनेवाला मछुआरा हूँ।

दूसरा सिपाही–अबे चोर! हम तुमसे तुम्हारा निवासस्थान और जाति नहीं पूछ रहे हैं।

कोतवाल– सूचक! इसे सब कहने दो, बीच में मत टोको।

दोनों सिपाही–श्रीमान् की जैसी आज्ञा। बोल रे! बोल!

पुरुष–मैं जाल, बंसी आदि मछली को पकड़नेवाले साधनों से अपने कुटुम्ब का पालन-पोषण करता हूँ।

कोतवाल–(हँसकर) तेरी आजीविका तो बहुत अच्छी है।

पुरुष–स्वामी! ऐसा न कहें, क्योंकि

लोग चाहे जितनी भी निन्दा करें, किन्तु जो जिसका स्वाभाविक जाति-धर्म या आजीविका है, उसका उसे कभी त्याग नहीं करना चाहिए। देखिये, करुणा से आर्द्र हृदय वेदनिष्ठ-ब्राह्मण भी यज्ञों में पशुओं की हिंसा जैसे क्रूर-कर्म में प्रवृत्त होते हैं।

श्याल–इसके बाद क्या हुआ?

पुरुष–एक दिन जब मैं एक रोहू-मछली को टुकड़े-टुकड़े काट रहा था, तब उसके पेट के भीतर रत्न के कारण चमकती हुई इस अँगूठी को देखा। बाद में मैं उसी को बेचने के लिए दिखला रहा था कि आप लोगों ने मुझे पकड़ लिया। अब चाहे मुझे मारिये या छोड़िये, इसके मिलने का यही सम्पूर्ण वृत्तान्त है।

कोतवाल–जानुक! इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि यह गोह खानेवाला मछुआ ही है, क्योंकि इसके शरीर से कच्चे मांस की दुर्गन्ध आ रही है। हाँ, इस अँगूठी के मिलने की घटना की जाँच करनी चाहिए। इसे राजदरबार में हमें ले चलना चाहिए।

दोनों सिपाही–ठीक। अरे गिरहकट! चल। (सभी घूमते हैं)

कोतवाल—सूचक! नगरद्वार पर सावधानी से इसकी रखवाली करना, तब तक मैं महाराज से इस अँगूठी के प्राप्त होने का विवरण निवेदन करके और उनकी आज्ञा लेकर आता हूँ।

दोनों सिपाही—आप महाराज की अनुग्रह-प्राप्ति के लिए जायँ।

(कोतवाल चला गया)

प्रथम सिपाही—जानुक, आवुत्त देर कर रहे हैं।

दूसरा सिपाही—अरे! राजा के पास अवसर देखकर ही जाया जाता है।

प्रथम सिपाही—जानुक, इसे मारने के लिए माला पहनाने को मेरे हाथ फड़क रहे हैं। (मछुआरे की ओर संकेत करता है)

मछुआ—यह आपके योग्य नहीं है कि बिना किसी कारण के मुझे मारने का विचार करें।

दूसरा पुरुष—(देखकर) ये हमारे अधिकारी हाथ में महाराज का आज्ञापत्र लिये हुए इसी ओर मुख किये आते दिखायी पड़ रहे हैं। अब तू गिद्धों का आहार बनेगा या कुत्तों के मुँह में जायेगा।

कोतवाल—सूचक! इस मछुआरे को छोड़ दो। अँगूठी के मिलने का रहस्य मालूम पड़ गया।

सूचक—श्रीमान् की जैसी आज्ञा।

दूसरा सिपाही—यह तो यमराज के घर पहुँचकर भी वापस लौट आया।

(मछुआरे को बन्धन से मुक्त करता है)

मछुआ—(कोतवाल को प्रणामकर) श्रीमान! बताएँ मेरी आजीविका कैसी रही?

कोतवाल—महाराज ने इस अँगूठी के मूल्य के बराबर इष्ट उपहार देने की आज्ञा भी दी है। (मछुए को धन देता है)

मछुआ—(प्रणामपूर्वक स्वीकार करते हुए) श्रीमान्! मैं अनुगृहीत हूँ।

सूचक—इसे ही राजा की कृपा कहते हैं, जिससे सूली से हटाकर हाथी की पीठ पर बैठा दिया।

जानुक—श्रीमान्! पारितोषिक कहता है कि (से लगता है कि) अँगूठी स्वामी को विशेष प्रिय थी।

कोतवाल—मैं तो समझता हूँ कि उस अँगूठी में जो बहुमूल्य नग जड़ा था, उसके कारण वह महाराज को प्रिय नहीं लगी, बल्कि उसे देखकर महाराज को किसी प्रियजन की याद आ गयी है; क्योंकि स्वभाव से गम्भीर होने पर भी उनके नेत्र अँगूठी को देखकर अनमने-से हो गये थे।

सूचक—तब तो श्रीमान् ने महाराज का बहुत-बड़ा काम किया है।

जानुक—यों कहो कि इस मछुए ने राजा का बड़ा काम किया।

(मल्लाह को ईर्ष्या से देखता है)

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

मछुआ–श्रीमान्! इसका आधा भाग आप लोगों के मदिरापान के लिए है।

जानुक–यह तुमने ठीक कहा।

कोतवाल–मछुए! अब तो तुम मेरे बड़े अच्छे मित्र हो गए। मदिरा का पात्र हमारा-तुम्हारा प्रथम प्रीतिपात्र हो–ऐसी मेरी इच्छा है। चलो मदिरालय की ओर चलें।

(सब चले जाते हैं)

बोध-प्रश्न

6. मछुआरा किस अपराध में पकड़ा जाता है?
7. मछुआरे की जीविका का साधन क्या है?
8. अंगूठी मिलने का क्या रहस्य है?
9. मदिरा का पात्र किसका प्रथम प्रीतिपात्र है?
10. बहुमूल्य नग को देखकर महाराज को किसकी याद आ जाती है?

3.5 सारांश

स्वप्नवासवदत्त में विदूषक अपनी स्थिति चित्रित करता है कि वह सभी साधनों की प्राप्ति के होने पर भी वात-रोग से घिरा होने के कारण सुखी नहीं है। उसके अनन्तर पद्मावती एवं राजा का संवाद है, जिसमें पद्मावती वासवदत्ता के सन्दर्भ में प्रश्न करती है। राजा अपना प्रेम वासवदत्ता के प्रति प्रकट करते हैं, यह सुनकर वासवदत्ता प्रसन्न होती है। वासवदत्ता एवं पद्मावती का संवाद भी रोचक है। अभिज्ञानशकुन्तल पाठ में राजा दुष्यन्त शकुन्तला को पहचान के लिए अपनी अंगूठी दे देते हैं लेकिन शकुन्तला से वह अंगूठी गायब हो जाती है। वही अंगूठी मछुवारे को मछली के पेट से प्राप्त होती है, जिसे वह बाजार में बेचने जाता है एवं कोतवाल द्वारा पकड़ लिया जाता है। मछुवारे द्वारा कहे जाने पर भी कि यह अंगूठी उसे मछली के पेट से मिली है, कोतवाल विश्वास नहीं करता और राजा के पास ले जाता है। राजा को उस अंगूठी के आधार पर शकुन्तला का वृतान्त स्मरण आ जाता है। अतः उस मछुआरे को पुरस्कार देकर छोड़ देते हैं।

3.6 शब्दावली

1.	पासादेसु	=	महलों में।
2.	ण्हाईअदि	=	नहाते हैं।
3.	उत्तरकुरुवासो	=	उत्तरकुरुवास।
4.	गदो	=	गया।
5.	कोइलाणं	=	कोयलों की।
6.	पमदवणं	=	प्रमदवन।
7.	वारेसि	=	मना करना।
8.	अय्यउत्तो	=	आर्यपुत्र।
9.	सिणेहो	=	स्नेह।

10. णिस्ससिअ = साँस छोड़कर।
11. शोत्तिए – श्रोत्रिय ब्राह्मण
12. अवदालिअ – उतारकर
13. हत्थिक्खंदे – हाथी पर चढ़ाना
14. दिअश – दिवस/दिन।
15. राअउलं – राजदरबार।
16. गोपुरदुआरे – नगरद्वार पर।
17. फुल्लंति – फड़कते हैं।
18. जालोअजीवा – मछुआ।
19. पालिदोरिशअ – पारितोषिक।
20. सोंडिआपणं – मदिरालय।
21. कुडुंबभलणं – कुटुम्ब का पालन-पोषण।
22. जालोअजीनी – जल से आजीविका चलाने वाला।

3.7 सन्दर्भ-ग्रन्थ

1. 'स्वप्नवासवदत्तम्' (प्राकृत-अंश) भास चौखम्बा सुरभारती, वाराणसी।
2. अभिज्ञान-शाकुन्तलम् - कालिदास, व्या. कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजय कुमार प्रकाशन, इलाहाबाद।

3.8 सहायक-ग्रन्थ

1. पालि-प्राकृत-अपभ्रंश संग्रह - डॉ. आर.एन.मिश्र, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।
2. भास नाटकचक्र - सी.आर. देव, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. कालिदास ग्रंथावली- प्रो. रेवा प्रसाद द्विवेदी, उ.प्र. संस्कृत संस्थान, लखनऊ।
4. प्राकृतभाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डॉ. नेमिचन्द शास्त्री तारा पब्लिकेशन, वाराणसी।

3.9 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. वासवदत्ता आर्यपुत्र के प्रति अधिक अनुरागी है, इसलिए अपना अनुराग पद्मावती से प्रकट भी कर देती है तथा पद्मावती से भी वह बात पूछती है जो नहीं पूछना चाहिए।
2. पद्मावती चेटी को फूल चुनने से इसलिए मना करती है कि राजा फूलों का वैभव देखेंगे, तो वह सम्मानित होगी।
3. चेटी स्वामी से वीणा सीखने के लिए कहती है।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

4. विदूषक मागधी-प्राकृत का प्रयोग करता है।

5. स्नेहीजन स्वजनों को नहीं छोड़ते हैं।

6. मछुआरा कीमती अंगूठी बाजार में बेचने जाता है, अत: इतनी कीमती अंगूठी देखकर कोतवाल उसे चोर समझकर पकड़ लेता है।

7. मछुआरे की आजीविका का साधन जल में रहनेवाली मछली को पकड़कर बेचना है।

8. अंगूठी मिलने का रहस्य है कि यह अंगूठी राजा ने शकुन्तला को दी थी। स्नान करते समय यह उससे गिर गई। राजा शकुन्तला को भूल जाता है लेकिन जब यही अंगूठी मछुआरे से कोतवाल के माध्यम से प्राप्त होती है, तो राजा को शकुन्तला के साथ अपना बिताया हुआ प्रसंग याद आ जाता है।

9. कोतवाल और मछुवारे का 'मदिरा पात्र' प्रथम प्रीतिपात्र है।

10. बहुमूल्य नग को देखकर महाराज को शकुन्तला की याद आ जाती है।

3.10 अभ्यास प्रश्न

1. पद्मावती का वासवदत्ता के प्रति किय गये व्यवहार को अपने शब्दों में लिखें।

.....

.....

.....

.....

2. पाठ में आये कथावस्तु को संक्षेप में लिखें।

.....

.....

.....

.....

3. प्राकृत नाट्य-साहित्य के विकास में संस्कृत का योगदान लिखिए।

.....

.....

.....

.....

4. पठित नाटक में किस प्राकृत का प्रयोग हुआ है? सोदाहरण लिखिए।

.....

.....

.....

.....

5. विदूषक का स्वभाव-वर्णन संक्षेप में करें।

.....

.....

.....

.....

6. अभिज्ञानशाकुन्तलम् कथानक को संक्षेप में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

7. इस कथा में अपनी आजीविका को श्रेष्ठ क्यों कहा गया? विवेचन करें।

.....

.....

.....

.....

8. कोतवाल और मधुआ के वार्तालाप को अपने शब्दों में लिखें।

.....

.....

.....

.....

9. राजा दुष्यन्त को शकुन्तला की स्मरण कैसे हो जाता है?

.....

.....

.....

.....

—◆—

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

चतुर्थ पाठ (Unit-IV)

4. प्राकृत-व्याकरण का सामान्य-परिचय

पाठसंरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 वर्णमाला
4.3.1 स्वर एवं व्यंजन-वर्णों का स्वरूप
4.3.2 प्राकृत-वर्णों की सामान्य-विशेषताएं
4.3.3 प्राकृत-शब्द
बोधप्रश्न
4.4 ध्वनिपरिवर्तन (वर्ण-विकृति एवं वर्ण-परिवर्तन)
4.4.1 स्वर-विकार
4.4.2 मात्रात्मक परिवर्तन
4.4.3 गुणात्मक परिवर्तन
4.4.4 स्वरों के अन्य परिर्वतन
4.4.5 प्रारंभिक स्वरलोप
4.4.6 अर्धस्वर-परिवर्तन
4.4.7 व्यंजन-विकार
4.4.8 संयुक्त-व्यंजन
बोधप्रश्न
4.5 शब्दरूप
4.5.1 अकारान्त पुं. संज्ञा व विभक्ति-चिह्न
4.5.2 इकारान्त और उकारान्त पुल्लिंग संज्ञाओं में प्रयुक्त-चिन्ह
4.5.3 आकारान्त स्त्रीलिंग संज्ञाओं में प्रयुक्त-चिन्ह
4.5.4 इकारान्त और उकारान्त स्त्रीलिंग प्रत्ययों में अन्तर
4.5.5 नपुंसकलिंग संज्ञाओं के प्रत्यय
4.5.6 शब्दरूपों की प्रमुख विशेषताएँ
बोधप्रश्न
4.6 धातुरूप
4.6.1 धातुरूप के प्रत्यय-चिह्न
4.6.2 धातुरूप
4.6.3 धातुरूप की प्रमुख-विशेषताएँ
बोधप्रश्न
4.7 सारांश
4.8 शब्दावली
4.9 सन्दर्भ-ग्रन्थ
4.10 सहायक-ग्रन्थ
4.11 बोधप्रश्नों के उत्तर
4.12 अभ्यास-प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

पूर्व-पाठ में आपने विभिन्न प्राकृत-पाठ के माध्यम से प्राकृतभाषा तथा कथाओं का

अध्ययन किया। इस पाठ में आप प्राकृत-वर्णमाला, ध्वनि-परिवर्तन, शब्दरूप तथा धातुरूप का ज्ञान प्राप्त करेंगे। आप जानते हैं कि किसी भी भाषा का आधार उसका व्याकरण होता है। अतः आप प्राकृत-व्याकरण के सामान्यज्ञान से प्राकृतभाषा और साहित्य को अच्छी तरह समझ पायेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन से आप-

- प्राकृत में प्रयुक्त वर्णों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्राकृत-वर्णों की सामान्य-विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।
- अन्तस्थ और नासिक्य-ध्वनियों का प्रयोग करने में सक्षम होंगे।
- प्राकृत की शब्द-संरचना का ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- धातु-संरचना का ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- प्राकृत के शब्दरूप और धातुरूप की सम्यक् जानकारी प्राप्त करेंगे।
- प्राकृत के लकार की स्थिति का ज्ञान प्राप्त होगा।
- विभिन्न प्रकार के प्रयुक्त प्रत्ययों की जानकारी प्राप्त करेंगे।
- ध्वनि-परिवर्तन तथा ध्वनि-परिवर्तन का उद्देश्य और शब्दों के उच्चारण-सम्बन्धी आवश्यक-नियमों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4.3 वर्णमाला

विचारों की अभिव्यक्ति का प्रमुख-साधन 'भाषा' है। विचार-विनिमय में भाषा का प्रमुख योगदान होता है। परस्पर वचन-व्यवहार ही भाषा है। उच्चरित ध्वनि-संकेतों के माध्यम से व्यक्ति अपने भावों व विचारों को भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। किसी भी देश की सभ्यता, संस्कृति, दार्शनिक विचारधारा आदि में उस देश की भाषा-समृद्धि का प्रमुख योगदान होता है। शब्द, अर्थ और उनकी उचित-संयोजना ही किसी साहित्य या भाषा के आधार होते हैं। अर्थ के वाहक शब्द होते हैं। शब्दों से भाषा का निर्माण होता है। शब्द की संघटना वर्णों से होती है। प्रत्येक पूर्ण-ध्वनि को 'वर्ण' कहते हैं। किसी भी भाषा को जानने के लिए उसकी वर्णमाला का बोध होना आवश्यक है, अतः प्राकृतभाषा की वर्णमाला का ज्ञान भी आवश्यक है।

आप जानते है कि देवनागरी-लिपि की एक विशिष्ट और वैज्ञानिक पद्धति निर्मित व परिपूर्ण वर्णमाला है। इसमें स्वर और व्यंजन-वर्ण होते हैं।

4.3.1 स्वर एवं व्यंजन-वर्णों का स्वरूप

वर्णों के प्रमुखतः दो भेद होते हैं- स्वर और व्यंजन। स्वर वे हैं, जिनका उच्चारण स्वयं होता है; तथा व्यञ्जन वे हैं, जिनके उच्चारण में किसी स्वर की सहायता ली जाती है। इनका स्वरूप आप आगे पढ़ेंगे।

(अ) स्वरों का स्वरूप -

	कण्ठ्य	**तालव्य**	**ओष्ठ्य**	**कण्ठ-तालव्य**	**कण्ठ-ओष्ठ्य**
ह्रस्व	अ	इ	उ	ऍ	ऑ

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

दीर्घ आ ई ऊ ए ओ

(आ) व्यंजनों का स्वरूप -

उच्चारण स्थल	**वर्ग**	**स्पर्श**				**नासिक्य**
कण्ठ्य	क-वर्ग	क्	ख्	ग्	घ्	ङ्
तालव्य	च-वर्ग	च्	छ्	ज्	झ्	ञ्
मूर्धन्य	ट-वर्ग	ट्	ठ्	ड्	ढ्	ण्
दन्त्य	त-वर्ग	त्	थ्	द्	ध्	न्
ओष्ठ्य्	प-वर्ग	प्	फ्	ब्	भ्	म्

अन्तस्थ (अर्धस्वर):

य् (तालव्य), र (मूर्धन्य), ल् (दन्त्य), व् (दन्त-ओष्ठ्य)

ऊष्म 'स्', महाप्राण 'ह्'

विशेष : ह्रस्व ऍ और ऑ का प्रयोग प्राय: संयुक्तव्यंजनों के पूर्व होता है: जैसे, खॅत्त, ओॅट्ठ, तॅल्ल, सॉम्म, पॅम्म, जॉव्वण।

(इ) वर्णमाला का वर्गीकरण

अघोष : क्, ख्, च्, छ्, ट्, ठ्, त्, थ्, प्, फ्

घोष : ग्, घ्, ज्, झ्, ड्, ढ्, द्, ध्, ब्, भ्

अल्पप्राण : क्, ग्, ङ्, च्, ज्, ञ् ट्, ड्, ण्, त्, द्, न् प्, ब्, म्, य्, र्, ल्, व्

महाप्राण : ख्, घ्, छ्, झ्, ठ्, ढ्, थ्, ध्, फ्, भ्, श्, स्, ष्, ह्

स्वर, अन्तस्थ और नासिक्य व्यंजन घोष ध्वनियाँ हैं।

नासिक्य व्यंजन और अन्तस्थ अल्पप्राण हैं।

स् और ह् महाप्राण ध्वनियाँ हैं।

3.3.2 प्राकृतवर्णों की सामान्य विशेषताएं

प्राकृतभाषाओं का क्रमपूर्वक परिवर्तन इसप्रकार है:–

प्रथम स्तर : सबसे पहले परिवर्तन इसप्रकार पाये जाते हैं:

(1) ऋ = अ, इ, उ; ऐ = ए (आइ-अइ-ए); औ = ओ (आउ-अउ-ओ)।

(2) तीन संयुक्त-व्यंजनों के स्थान पर सिर्फ दो ही संयुक्त-व्यंजनों का प्रयोग।

(3) संयुक्त-व्यंजनों में समीकरण की प्रक्रिया और अन्य परिवर्तन।

द्वितीय स्तर : बाद में अघोष-व्यंजनों को घोष बनाना।

तृतीय स्तर : तत्पश्चात् मध्यवर्ती-अल्पप्राण का लोप और महाप्राण का ह् में परिवर्तन।

चतुर्थ स्तर : इसके बाद नाम-विभक्ति और क्रिया-प्रत्ययों में दूरगामी परिवर्तन।

य श्रुति

विशेषरूप से स्वर यदि 'अ' या 'आ' हो, तो वह वैकल्पिकरूप से 'य' अथवा 'या' हो जाता है तथा इसे 'य श्रुति' कहते हैं।

3.3.3 प्राकृत-शब्द

प्राकृतभाषा के जो शब्द संस्कृत के बिल्कुल समान हैं, उन्हें **तत्सम** कहा जाता है और जिनमें ध्वनि परिवर्तन हुआ है, उन्हें **तद्भव** कहा जाता है। अन्य शब्द जिनकी प्राय: संस्कृत के साथ तुलना नहीं की जा सकती और जिनका उद्गम किसी अन्यभाषा से हुआ है, उन्हें **देश्य** शब्द कहा जाता है। ये तीनों प्रकार के शब्द इस प्रकार हैं:–

तत्सम : कुमार, अभय, देव, बद्ध, रमणी, आरूढ, अह।

तद्भव : वयण (वदन), दाहिण (दक्षिण), भज्जा (भार्या), जाम (याम), तस्स (तस्य), घेत्तूण (गृहीत्वा)।

देशज : लडह (रम्य), मरट्ट (गव), कोट्ट (दुर्ग), बिट्टी (पुत्री) हल्लफल्ल (त्वरा), डाल (शाखा), गीस (प्रभात), चंग (रम्य), चड (आरुह्) दिक्करिया (पुत्री)।

बोधप्रश्न

1. प्राकृत में कितने ह्रस्व-स्वरों का प्रयोग होता है?
2. प्राकृत में कौन-कौन से दीर्घ-स्वरों का प्रयोग होता है।
3. अन्तस्थ (अर्धस्वर) कौन-से हैं।

3.4 ध्वनिपरिवर्तन (वर्ण-विकृति एवं वर्ण-परिवर्तन)

प्राकृतभाषा में ध्वनि-सम्बन्धी परिवर्तन उच्चारण में प्राय: सरलता लाने और कम प्रयत्न करने के कारण हुए हैं। मनुष्य का स्वभाव है कि यदि कोई कार्य कम परिश्रम से हो जाय तो उसके लिए अधिक परिश्रम करने की क्या आवश्यकता है। परिणाम-स्वरूप प्राकृत में अनेक ध्वनियां परिवर्तित हो गई हैं। उच्चारण और भौगोलिक स्थिति के अनुसार वर्णों में विभेद पाया जाता है। उसके कारण वर्णों में विकृति और परिवर्तन दिखाई पड़ता है। इन वर्ण, विकृतियों और परिवर्तनों को आप आगे समझ सकेंगे।

3.4.1 स्वर-विकार

(अ) प्राकृतभाषा में विसर्ग (:) का प्रयोग नहीं होता है। अकारान्त-शब्द के बाद विसर्ग आता है, तब प्राकृत में 'अ' का वैकल्पिक 'ओ' हो जाता है : रामो (राम:), तओ (तत:)।

(ब) **ऋ** = **ऋ ऐ** और **औ** के परिवर्तन इस प्रकार होते हैं।

ऋ = **अ** : तण (तृण), दढ (दृढ), वसभ (वृषभ), कय (कृत)।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

ऋ = इ : किवा (कृपा), सिट्ठी (सृष्टि) सिंगार (श्रृङ्गार,), निवो (नृपः)।

ॠ = ए : गेह (गृह), वेंट (वृन्त), गेज्झइ (गृह्यते)।

ऋ = रि : रिद्धि (ऋद्धि), रिण (ऋण), रिसि (ऋषि)

ऐ = ए : वेर (वैर) नेमित्तिअ (नैमित्तिक), एरावण (ऐरावण), देवसिय (दैवसिय)

ऐ = अइ : वइर (वैर), दइव (दैव), भइरव (भैरव), कइलास (कैलाश)

औ = औ : कोरव (कौरव), गोरव (गौरव), पोराणिअ (पौराणिक), सोजण्ण (सौजन्य)

औ = अउ : कउरव (कौरव) गउरव (गौरव), पउर (पौर)

3.4.2 मात्रात्मक-परिवर्तन

स्वरों में कभी-कभी मात्रात्मक और गुणात्मक, परिवर्तन निम्नप्रकार से होते हैं:–

अ=आ : वारिस (वर्ष), चाउरंत (चतुरन्त), सामिद्धि (समृद्धि), पावरण (प्रवचन), परकेर (परकीय)

इ=ई : भिउडी (भृकुटि)

उ=ऊ : मूसल (मुसल)

आ=अ : कुमर (कुमार), जह (यथा), पहर (प्रहार), ब (बा),चमर (चामर)

ई=इ : अलिय (अलीक), आणिय (आनीत) करिस (करीष),

ऊ=उ : महुअ (मधूक), उलुय (उलूक), बाउल (बातूल)

3.4.3 गुणात्मक परिवर्तनः

अ=इ : किरिण (किरण), उत्तिम (उत्तम)

उ : पढुम (प्रथम), बुंद (वृन्द)

ए : वेल्ली (वल्ली), सेज्जा (शय्या)

ओ : परोप्पर (परस्पर), पोम्म (पद्म)

आ=इ : सइ (सदा), निसिअर (निशाकर), साहिज्ज (साहाय्य)

उ : उल्ल (आर्द्र)

ए : मेत्त (मात्र), पारेअव (पारावत)

इ=अ : तित्तिर (तित्तिरि), इअ (इति)

उ : उसु (इषु), उच्छु (इक्षु), विच्छुअ (वृश्चिक)

ए : पेंड (पिण्ड), सेंदूर (सिन्दूर)

ई=अ : हरडई (हरीतकी)

उ : जुण्ण (जीर्ण)

ऊ : विहूण (विहीन)

ए : पेऊस (पीयूष), केरिस (कीदृश), णेड (नीड)

उ=अ : गरु (गुरु), मउड (मुकुट)

आ : बाहा (बाहु)

इ : पुरिस (पुरुष)

ऊ=अ : दुअल्ल (दुकूल)

ए : णेउर (नूपुर)

ओ : तोणीर (तूणीर), मोल्ल (मूल्य)

ए=इ : दिअर (देवर), विअणा (वेदना), सिंधव (सेंधव<सैन्धव), धीर(धेर<धैय)

ओ=अ : मणहर (मनोहर), सररुह (सरोरुह), अण्णण्ण (अन्योन्य)

आ : गारव (गोरव<गौरव)

उ : मुअण (मोचन), दुवारिअ (दोवारिअ<दौवारिक)

ऊ : महूसव (महोत्सव)

3.4.4 स्वर के अन्य परिवर्तन

कभी-कभी स्वर का स्थान-परिवर्तन भी पाया जाता है। यथा:–

मुणिस (मनुष्य)

(अ) संयुक्त-व्यंजन के पूर्व का दीर्घस्वर प्राय: ह्रस्व बन जाता है:–

मग्ग (मार्ग), पुण्ण (पूर्ण), रज्ज (राज्य), पंडव, (पाण्डव) सक्क (शाक्य),

(ब) अनुस्वार–युक्त दीर्घ-स्वर भी ह्रस्व बन जाता है:–

पंसु (पांशु), मंस (मांस), सीयं (सीयां<सीताम्)

(स) संयुक्त-व्यंजन में से एक व्यंजन का लोप होने पर पूर्व का ह्रस्व-स्वर दीर्घ बन जाता है:–

वास (वर्ष), जीहा (जिह्वा), ऊसव (उत्सव), पाण्ण (पत्तन या पट्टण)

(द) अनुस्वार का लोप होने पर भी ऐसा ही होता है:–

सीह (सिंह), वीसइ (विंशति)

(क) संयुक्त-व्यंजन के पूर्व का दीर्घ-स्वर संयुक्त-व्यंजन में से एक का लोप होने पर दीर्घ ही बना रहता है :

दीह (दीर्घ), आणा (आज्ञा), सीस (शीर्ष), ईसर (ईश्वर), तूर (तूर्य)

(ख) व्यंजन का द्वित्व करने पर पूर्वगामी दीर्घ स्वर ह्रस्व बन जाता है :

किड्डा (क्रीडा), खत्त (खात), दिज्जइ (दीयते)

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

3.4.5 प्रारंभिक स्वर-लोपः

कभी-कभी शब्द के आदि-स्वर का लोप हो जाता है:–

रण्ण(अरण्य), दग(उदक), ति (इति), व (इव), पि (अपि), हं(अहम्), पोसह (उपवसथ)

3.4.6 कभी-कभी अर्धस्वर 'य्' और 'व्' का आपस में परिवर्तन होता है।

य=इ : पडिणीय (प्रत्यनीक), वीइक्कंत (व्यतिक्रान्त)

व=उ : तुरियं (त्वरितम्), सुविण (स्वप्न)

अय=ए : चोरेई (चोरयति), कहेइ (कथयति)

अव=ओ : ओसर (अवसर), ओइण्ण(अवतीर्ण) लोण (लवण), ओसाण (अवसान)

3.4.7 व्यंजन-विकार

जब एक व्यञ्जन दूसरे व्यञ्जन में परिवर्तित हो जाता है, तब वह व्यञ्जन- विकार कहलाता है।

(1) असंयुक्त-व्यंजन

ऊष्म-व्यंजन 'श्' और 'ष्' का प्रायः 'स्' हो जाता है:–

श्=स् : सस (शश), कलस (कलश), सिरा (शिरा), दस (दश), सरण (शरण), रसणा (रशना)

ष्=स् : कसाय (कषाय), भूसण (भूषण), दोस (दोष), संड (षण्ड), मूसअ (मूषक)।

(अ) प्रारंभिक व्यंजन-परिवर्तन

(1) प्रारंभिक 'य्' का प्रायः 'ज्' हो जाता है:–

य्=ज् : जाम (याम), जोग (योग), जुग (युग), जोह (योध), जहा (यथा)

(2) 'न्' का सर्वत्र 'ण्' हो जाता है (नो णः सर्वत्र):–

न्=ण् : णिमित्त (निमित्त), णाम (नाम), णय (नय), णर (नर), णअर (नगर)

(3) कभी-कभी कुछ व्यंजनों का परिवर्तन अपवाद के रूप में निम्नप्रकार से भी पाया जाता है:–

(i) **क=च** : चिलाअ (किरात)

भ=ब : बहिणी (भगिनी)

म=व : वम्मह (मन्मथ)

ल=ण : णंगल (लाङ्गल), णंगूल (लाङ्गूल)

(ii) अल्पप्राण-व्यंजन का अपवाद के रूप में महाप्राण-व्यंजन में बदलना:–

खील (कील), खुज्जा (कुब्जा), फरुस (पुरुष), फलिहा (परिखा), फणस (पनस), फाडण (पाटन), भिंभिसार (विम्बिसार)

(iii) दन्त्य-व्यंजन का मूर्धन्य-व्यंजन में बदलना:–

डहर (दहर-दभ्र), डाह (दाह), डहइ (दहति), डसण (दशन)

(iv) श्, ष्, स्, का छ् में बदलना:–

छाव (शाव), छिरा (शिरा), छ (षट), छुहा (सुधा), छत्तिवण्ण (सप्तपर्ण)

(ब) मध्यवर्ती व्यंजन-परिवर्तन

मध्यवर्ती-व्यंजन उसे कहते हैं, जो दो स्वरों के बीच में आता है, जैसे–रति (र्+अ, त्+इ) में त् और 'वचन' में (व्+अ, च्+अ, न्+अ) में च् और न् मध्यवर्ती व्यंजन हैं।

(1) मध्यवर्ती न् ण् में बदलता है:–

न=ण् : खणण (खनन), समाण (समान), जण(जन), आसण (आसन), रयण (रत्न), वाणर (वानर), अणल (अनल)।

(2) स् का कभी-कभी ह् हो जाता है:–

दह (दस-दश), पाहाण (पासाण-पाषाण), दिअह दिवह, (दिवस)

(3) मध्यवर्ती अल्पप्राण-व्यंजन ('ट' वर्ग के सिवाय) क्, ग्, च्, ज्, त्, द्, प्, अन्तस्थ य् और व् का प्राय: लोप हो जाता है।

क : सअल (सकल), सउण (शकुन), सेवअ (सेवक), दारिया (दारिका), मडअ (मृतक)

ग : अणुराअ (अनुराग), गअण (गगन,) साअर (सागर)

च : लोअण (लोचन), रूइर (रुचिर), पउर (प्रचुर), वअण (वचन), विआर (विचार)

ज : रेअणी (रजनी), भुआ (भूजा), राआ (राजा), भाअण (भाजन), पआ (प्रजा)

त : जीअ (जीत), रइ (रति), अईअ (अतीत), ताअ (तात), रसाअल (रसातल), माआ (माता)

द : मअण (मदन), णई (नदी), आएस (आदेश), पओस (प्रदोष), वेअ (वेद), अन्नआ (अन्यदा)

प : कइ (कपि), गोउर (गोपुर), दिसाआल (दिशापाल)

य : काअ (काय), मऊर (मयूर), पओवाह (पयोवाह) विओयण (वियोजन) पओजण (प्रयोजन)

व : भुअण (भुवन), देई (देवी), अडई (अटवी)

'प्' का 'व्' भी होता है :

प=व : मंडव (मण्डप), रूव (रूप), कविल (कपिल), उवाय (उपाय), उवहास (उपहास)।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

(4) मध्यवर्ती महाप्राण-व्यंजन ('च' वर्ग और 'ट' वर्ग सिवाय) 'ख्', 'घ्', 'थ्', 'ध', 'फ्' और 'भ्' का प्राय: 'ह्' हो जाता है।

ख : मुह (मुख), सही (सखी), लेह (लेख), साहा (शाखा), मऊह (मयूख), मुहर (मुखर)।

घ : जहण (जघन), ओह (ओघ), मेह (मेघ), लहु (लघु:), दीह (दीघ-दीर्घ), रहुवीर (रघुवीर)।

थ : रह (रथ), कहा (कथा), णाह (नाथ), गाहा (गाथा)।

ध : अहर (अधर), विविह (विविध), महु (मधु), साहु (साधु), पहाण (प्रधान)।

फ : मुत्ताहल (मुक्ताफल), सेहालिआ (शेफालिका)।

भ : णह (नभ), सहा (सभा), आहरण (आभरण), सुरहि (सुरभि), पहाय (प्रभात)।

(5) घोषीकरण

(अ) अघोष 'ट्' और 'ठ्' प्राय: घोष 'ड्' और 'ढ्' में बदल जाते हैं।

ट्=ड् : तड (तट), कूड (कूट), चेडी (चेटी), कुडिल (कुटिल), जडिअ (जटित), वडुअ (बटुक), छडा (छटा), कडि (कटि)।

ठ्=ट : पढ (पठ), कुढार (कुठार), मढ (मठ), कढिण (कठिन), सढ (शठ), धरवीढ (धरापीठ), कढोर (कठोर)।

(ब) कभी-कभी 'क्' घोष-व्यंजन 'ग्' में बदल जाता है :

एग (एक), नायग (नायक), आगार (आकार), लोग (लोक), मगर (मकर), तिग (त्रिक)।

(6) मूर्धन्यीकरण और घोषीकरण

(अ) दन्त्य-व्यंजन कभी-कभी मूर्धन्य बनकर फिर घोष हो जाते हैं।

पडिय (पतित), पडाया (पताका), सिढिल (शिथिल)।

(ब) शब्द में ऋकार और रकार आने पर दन्त्य-व्यंजन कभी कभी मूर्धन्य बनकर फिर घोष बन जाते हैं :

मडय (मृतक), पडिहार (प्रतिहार), पढम (प्रथम)।

(7) कुछ अन्य परिवर्तन

कभी-कभी निम्न परिवर्तन पाये जाते हैं :

(अ) द्वित्वीकरण :

एक्क (एक), तेल्ल (तैल), निहित्त (निहित), उच्चिय (उचित), पेम्म (प्रेम), बहुप्फल (बहुफल), परव्वस (परवश)।

(ब) वर्ण-लोप:

उंबर (उदुम्बर), सीया (शिबिका), राउल (राजकुल), अवरत्त, (अपररात्र), अड (अवट), भाण (भाजन), आअ (आगत), हिअ (हृदय)।

(स) वर्ण-व्यत्ययः

वाणारसी (वाराणसी), दीहर (दीरह<दीर्घ), पेरंत (पयरन्त<पर्यन्त), अच्छेर (अच्छयर<अच्छरय<आश्चर्य), मरहट्ठ (महाराष्ट्र)।

(द) कभी-कभी ड्, द्, और र् का ल् हो जाता है :

ड्=ल् : तलाय (तडाग), गरुल (गरुड), वीला (ब्रीडा), नियल (निगड), वलयामुह (वडवामुख), कीला (क्रीडा)।

द्=ल् : पलित्त (प्रदीप्त), दोहल (दोहद), कलंब (कदम्ब), दुवालस (द्वादश)।

र्=ल् : चलण (चरण), सुकुमाल (सुकुमार), हलिद्दा (हरिद्रा), मुहल (मुखर), फलिहा (परिखा)।

अपवाद के रूप में निम्न-परिवर्तन भी पाये जाते हैं:

क=ह : चिहुर (चिकुर), फलिह (स्फटिक)।

ख=क : संकला (शृंखला)।

ग=ल : छाल (छाग)।

ण=ल : वेलु (वेणु)।

ट=ल : फलिह (स्फटिक) [ट्=ड्=ल्]

त=ह : भरह (भरत)।

फ=भ : सेभालिया (शेफालिका)।

ब=व : अलावु (अलावु), सवर (शबर)।

व=म : नीमी (नीवी)।

(स) अन्त्य-व्यंजन-परिवर्तन

प्राकृत में शब्द के अन्त में व्यंजन नहीं आता है। अन्य संस्कृत आदि भाषा के अंतिम व्यंजन का या तो लोप हो जाता है अथवा उसमें कोई स्वर का आगम हो जाता है या वह अनुस्वार में बदल जाता है।

(1) **लोप :** जाव (यावत्), मण (मनस्), जग (जगत्)।

(2) **आगम :** वणिअ (वणिज=वणिज्), दिशा (दिशा-दिश्) सरिया (सरिता-सरित्)।

(3) अंतिम अनुनासिक-व्यंजन का अनुस्वार हो जाता है:

कहं (कथम्), रामं (रामम्), किं (किम्), एवं (एवम्), भवं (भवान्), भगवं (भगवान्)।

(4) कभी-कभी अंतिम-व्यंजन अनुस्वार में बदल जाता है:

जं (यत्), सम्मं (सम्यक्), मणं (मनाक्), सक्खं (साक्षात्), मरणं (मरणात्)।

3.4.8 संयुक्त-व्यंजन

(अ) प्रारंभिक संयुक्त-व्यंजन

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

(1) शब्द के प्रारंभ में संयुक्त-व्यंजन प्रायः नहीं आते हैं।

लोप : उनमें से प्रायः एक का लोप हो जाता है: वइयर (व्यतिकर), णाय (न्याय), पिय (प्रिय), गाम (ग्राम), सर (स्वर), सहाव (स्वभाव), दीव (द्वीप), णेह (स्नेह), णाय (ज्ञात), थइअ (स्थगित), हस्स (ह्रस्व), कम (क्रम), थइर (स्थविर), चाग (त्याग), खण (क्षण), जूय (द्यूत), झाण (ध्यान), छुहिअ (क्षुधित)

(2) **मध्य में स्वरागम :** कभी-कभी संयुक्त-व्यंजन के बीच में स्वर का आगम हो जाता है।

अ. सणेह (स्नेह)

इ. सिरी (श्री), सिणिद्ध (स्निग्ध), गिलाण (ग्लान)।

उ. दुवार (द्वार), सुमरिय (स्मृत), सुमरण (स्मरण),

(3) **अपवाद :**

(i) अपवाद के रूप में संयुक्त-व्यंजन के प्रारंभ में स्वर का आगम : इत्थी (स्त्री)।

(ii) अपवाद के रूप में निम्न संयुक्त व्यंजन प्रारंभ में रहते हैं:

ण्ह ➢ ण्हाण (स्नान), ण्हारु (स्नायु), ण्हुसा (स्नुषा)

म्ह ➢ म्हि (अस्मि), म्ह (स्मः)

ल्ह ➢ ल्हसिअ (स्रस्त), ल्हसुण (लशुन), ल्हिक्क (नि+ली) व्यंजन+र् : द्रह (ह्रद), प्रिय, व्रंद (वृन्द)।

(ब) मध्यवर्ती संयुक्त-व्यंजन

(1) प्राकृत में एक साथ दो से अधिक व्यंजन संयुक्तरूप में नहीं आते हैं : सत्त (सत्त्व), सामत्थ (सामर्थ्य), मंत (मन्त्र), सत्थ (शस्त्र), रंध (रन्ध), जोण्हा (ज्योत्स्ना)।

(2) समीकरण : अलग-अलग वर्ग के दो व्यंजन प्रायः एक साथ नहीं रहते हैं। उनमें से एक को दूसरे के समान बना दिया जाता है। इस प्रक्रिया को 'समीकरण' कहा जाता है।

समीकरण का सामान्य-नियम यह है कि संयुक्त-व्यंजनों में जो व्यंजन सबल (strong) होता है, वह अबल (weak) व्यंजन को अपने समान बना देता है। व्यंजनों के बलाबल का क्रम इसप्रकार है।

(i) स्पर्श, (ii) अनुनासिक, (iii) ल, (iv) स, (v) व, (vi) य, और (vii) र।

जब समानबल वाले व्यंजन संयुक्तरूप में आते हों, तब पहला व्यंजन दूसरे के समान हो जाता है : भत्त (भक्त), जम्म (जन्म)।

असमानबल वाले संयुक्त-व्यंजनों में से सबल-व्यंजन अबल को अपने समान बना लेता हैं:

(i) लग्ग (लग्न), (ii) सुक्क (शुक्ल), (iii) अरण्ण (अरण्य), (iv) बिल्ल (बिल्ब), (v) सल्ल (शल्य), (vi) सव्व (सर्व), (vii) वस्स (वर्ष), (viii) सिस्स (शिष्य)।

समीकरण के निम्न दो प्रकार हैं:

(अ) पुरोगामी समीकरण : इसमें संयुक्त-व्यंजन का द्वितीय-व्यंजन प्रथम-व्यंजन के समान बन जाता है। अण्णया (अन्यदा), समग्ग (समग्र), कल्लाण (कल्याण), अण्णेसण (अन्वेषण), अवस्स (अवश्य)।

(ब) पश्चगामी समीकरण : इसमें प्रथम-व्यंजन द्वितीय के समान हो जाता है।

जुत्त (युक्त), सद्द (शब्द), खग्ग (खड्ग), जम्म (जन्म), कम्म (कर्म), सव्व (सर्व)।

(क) संयुक्त-व्यंजन में यदि एक व्यंजन महाप्राण हो, तो दूसरा व्यंजन उस महाप्राण का अल्पप्राण हो जाता है और वह महाप्राण के पहले आता है-

पुरोगामी : विग्घ (विघ्न), विक्खाय (विख्यात), अब्भंतर (अभ्यन्तर)।

पश्चगामी : सब्भाव (सद्भाव, उवलद्ध (उपलब्ध), समत्थ (समर्थ), विप्फुरिय (विस्फुरित)।

(ड) संयुक्त-व्यंजन में यदि एक ऊष्म-व्यंजन हो और दूसरा अल्पप्राण व्यंजन हो, तो वह अल्पप्राण-व्यंजन ऊष्म-व्यंजन के कारण महाप्राण-व्यंजन में बदल जाता है और वह महाप्राण अपने ही अल्पप्राण के बाद में आता है।

पुक्खर (पुष्कर), पच्छिम (पश्चिम), कट्ठ (कष्ट), हत्थ (हस्त), पुप्फ (पुष्प), कक्ख (कक्ष), अक्खि (अक्षि)। [क्ष का च्छ भी होता है : कच्छ (कक्ष), अच्छि (अक्षि), वच्छ (वृक्ष), दच्छ (दक्ष)]

स्वर-विकार के प्रकरण में यह पहले बताया गया है कि संयुक्त-व्यंजन के पहले यदि स्वर दीर्घ हो, तो उसे ह्रस्व बना दिया जाता है और यदि संयुक्त-व्यंजन में से एक का लोप हो जाय, और पूर्वगामी, स्वर ह्रस्व हो, तो उसे दीर्घ बना दिया जाता है:-

(i) परक्कम (पराक्रम), रज्ज (राज्य), मग्ग (मार्ग) तिण्ण (तीर्ण), तित्थ (तीर्थ), सिग्घ (शीघ्र), पुण्ण (पूर्ण), सुण्ण (शून्य)

(ii) वास (वर्ष), सीस (शिष्य), दूभग (दुर्भग)

(3) 'च' वर्ग में परिवर्तन

'य' के साथ में संयुक्तरूप में आनेवाला दन्त्य-व्यंजन अनुक्रम से 'च' वर्ग में बदल जाता है।

त्य=च्च समच्च (सत्य), अच्चंत (अत्यन्त), णिच्च (नित्य), अमच्च (अमात्य)

थ्य=च्छ ➢ मिच्छा (मिथ्या), रच्छा (रथ्या), णेवच्छ (नेपथ्य), पच्छ (पथ्य)

द्य=ज्ज ➢ अज्ज (अद्य), उज्जाण (उद्यान), उज्जम (उद्यम) विज्जा (विद्या)

ध्य=ज्झ ➢ मज्झ (मध्य), सज्झ (साध्य), उवज्झाय (उपाध्याय), अओज्झा (अयोध्या)

(4) मूर्धन्यीकरण

'ऋ'कार अथवा 'र'कार के साथ आने वाले दन्त्य-व्यंजन का कभी-कभी मूर्धन्यीकरण हो जाता है:

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

वट्ट (वृत्त), मट्टिया (मृत्तिका), इड्ढि (ऋद्धि), वट्ट (वर्तक) नट्ट (नर्त), अट्ठ (अर्थ), छिड्ड (छिद्र), अद्ध (अर्ध) सड्ढा (श्रद्धा)।

(5) र्य=ज्ज 'र्य' का प्राय: 'ज्ज' हो जाता है।

कज्ज (कार्य), अज्जा (आर्या), सुज्ज (सूर्य), मज्जाया (मर्यादा), पज्जंत (पर्यन्त), पज्जाय (पर्याय)।

(6) अनुनासिक-व्यंजन के पूर्व आनेवाला ऊष्म-व्यंजन प्राय: महाप्राण 'ह' में बदल जाता है और इन व्यंजनों का क्रम निम्नानुसार बदल जाता है:

ष्न=ण्ह ➢ पण्ह (प्रश्न)

ष्ण=ण्ह ➢ उण्ह (उष्ण)

स्न=ण्ह ➢ अण्हाण (अस्नान)

श्म=म्ह ➢ कम्हीर (कश्मीर)

ष्म=म्ह ➢ गिम्ह (ग्रीष्म)

स्म=म्ह ➢ विम्हय (विस्मय)

(7) महाप्राण 'ह' के साथ आने वाले अनुनासिक का क्रम भी इसी प्रकार बदलता है।

वण्हि (वह्नि), मज्झण्ह (मध्याह्न), बम्हण (ब्राह्मण), बम्हा (ब्राह्मा) [पल्हाय (प्रह्लाद)]

(8) ज्ञ्=ण्ण्, ज्ञ का प्राय: ण्ण में परिवर्तन हो जाता है: सव्वन्न, सव्वण्णू (सर्वज्ञ), अणुण्णाय (अनुज्ञात), विण्णाण (विज्ञान), परिण्णा (परिज्ञा).

(9) अनुस्वार में बदलना

कभी-कभी संयुक्त-व्यंजन में से एक का अनुस्वार में परिवर्तन हो जाता है:

पंख (पक्ष), गुंछ (गुच्छ), वयंस (वयस्क), वंक (वक्र), दंसण (दर्शन), अंसु (अश्रु), जंप् (जल्प), मणंसि (मनस्विन्)।

(10) स्वरभक्ति

कभी-कभी संयुक्त-व्यंजन के बीच में स्वर का आगमन हो जाता है:

अ: कसण (कृष्णा), गरहा (गर्हा), रयण (रत्न)

इ: हरिस (हर्ष), सुरिय (सूर्य), भारिया (भार्या), अच्छरिय (आश्चर्य), आयरिय (आचार्य), वीरिअ (वीर्य), वरिस (वर्ष)

उ: छउम (छद्म), पउम (पद्म)

(11) अन्य-परिवर्तन

अपवाद के रूप में दिखनेवाले कुछ अन्य-परिवर्तन इसप्रकार हैं:

क्म = प्प ➢ रुप्पिणी (रुक्मिणी), रुप्प (रुक्म)

त्त = **ट्ट** ➢ पट्टण (पत्तन)

त्म = **प्प** ➢ अप्पा (आत्मा), परमप्पा (परमात्मा)

त्र = **त्थ** ➢ तत्थ (तत्र), अत्थ (अत्र)

त्त्व = **च्च** ➢ चच्चर (चत्वर), तच्च (तत्त्व)

त्स = **च्छ** ➢ वच्छ (वत्स) उच्छाह (उत्साह)

ध्व = **ज्झ** ➢ सज्झस (साध्वस)

प्स = **च्छ** ➢ अच्छरा (अप्सरा), जुगुच्छा (जुगुप्सः)

स्त्र = **म्ब** ➢ अंब (आम्र), तंब (ताम्र)

य्य = **ज्ज** ➢ सेज्जा (शय्या), अज्ज (अय्य)

र्य = ख ➢ पखत्थ (पर्यस्त), पखाण (पर्याण)

ह्म = **म्भ** ➢ बंभण (ब्राह्मण)

ह्य = **ज्झ** ➢ गुज्झ (गुह्य), सज्झ (सह्य)

ह्व = **ब्भ** ➢ विब्भल (विह्वल)।

बोधप्रश्न

4. प्राकृतभाषा में विसर्ग (:) का प्रयोग होता है अथवा नहीं?
5. स्वर का स्थान-परिवर्तन होता है या नहीं?
6. व्यञ्जन-ध्वनि-परिवर्तन कितने तरह के होते हैं?
7. स्वरभक्ति से क्या अभिप्राय है?

3.5 शब्दरूप

भाषा का आधार वाक्य है और वाक्य का आधार शब्द। शब्दों की संरचना वर्णों के मेल से होती है। जो कान से सुनाई पड़ता है, वह शब्द है। एक या एक से अधिक अक्षरों के योग से बनी हुई स्वतंत्र सार्थक-ध्वनि को शब्द कहते हैं। शब्द दो प्रकार के होते हैं- सार्थक और निरर्थक। सार्थक-शब्द की 'पद' संज्ञा होती है। व्याकरण में सार्थक-शब्दों की ही चर्चा की जाती है। किसी भी भाषा को सीखने के लिए वाक्यरचना का अभ्यास करना होता है, जिसके लिए शब्द-रूप एवं धातु-रूप के ज्ञान की आवश्यकता है। प्राकृत में अकारान्त, इकारान्त, उकारान्त या इनके दीर्घस्वरान्त शब्द ही प्रयुक्त होते हैं। शब्द रूप में कारकों, विभक्तियों, लिंगों, वचनों आदि की जानकारी मिलती है।

सभी भाषाओं का अपना एक स्वभाव होता है। प्राकृतभाषा में भी शब्दरूप की अपनी विशेषताएं हैं। यहाँ पर संस्कृत की तरह द्विवचन का प्रयोग नहीं होता है। आगे आप कुछ उदाहरणों के माध्यम से उसे समझ सकेंगे -

3.5.1 अकारान्त पुं. संज्ञा व विभक्ति-चिह्न

विभक्ति	एकवचन		बहुवचन	
	संस्कृत	प्राकृत	संस्कृत	प्राकृत

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

1. पढमा	सु [सि]	डो >ओ ('अ' लोप)	जस्	लोप (अ >आ)
2. बीआ	अम्	म् >अनुस्वार (ं)	शस्	लोप (अ >आ, ए)
3. तइया	टा	ण, णं (अ>ए)	भिस्	हि, हिं हिँ (अ >ए)
5. पंचमी	ङसि	त्तो, दो >ओ, दु >उ, हि, हिंतो (अ >आ । 'त्तो प्रत्यय होने पर संयुक्ताक्षर होने से 'अ' को दीर्घ नहीं होगा)	भ्यस्	त्तो, दो >ओ, दु >उ, हि, हिंतो सुंतो (हि, हिंतो, सुंतो के दो-दो रूप होंगे- 'आ' और 'ए' के साथ। 'त्तो' के साथ 'अ' का लोप। अन्यत्र दीर्घ होगा)
6. छट्ठी/चउत्थी	ङस्	स्स	आम्	ण, णं (अ >आ)
7. सत्तमी	ङि	डे >ए, म्मि	सुप्	सु, सुं (अ >ए)
8. संबोहण	सु [सि]	ओ, आ, लोप (ओ, आ होने पर 'अ' लोप)	जस्	लोप (अ >आ)

देव शब्द के रूप

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
पठमा	देव+ओ = देवो	देव+आ = देवा
बीआ	देव+अं = देवं	देव+आ = देवा
तइया	देव+एण = देवेण	देव+एहि = देवेहि
चउत्थी एवं छट्ठी	देव+स्स = देवस्स	देव+आणं = देवाणं
पंचमी	देव+त्तो = देवत्तो	देव+आसुंतो = देवासुंतो, देव+अहिंतो = देवाहिंतो
सत्तमी	देव+म्मि = देवम्मि	देव+एसु = देवेसु
संबोहण	हे देव+ओ = हे देवो	हे देव + आ = हे देवा

प्राकृत में अकारान्त-शब्द के अन्यरूप भी जानना चाहिए।

3.5.2 इकारान्त और उकारान्त पुं. संज्ञाओं में प्रयुक्त-चिन्ह

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
पढमा	लोप ('इ, उ' को दीर्घ)	णो, अउ, अओ, लोप अवो ('अउ' और 'अओ' होने पर 'इ, उ' का

		लोप। प्रत्यय का लोप होने पर 'इ, उ' को दीर्घ। 'अवो' केवल उकारान्त शब्दों में होगा।)
बीआ	म् >अनुस्वार	णो, लोप (लोप होने पर दीर्घ)
तइआ	णा	हि, हिं, हिँ ('इ, उ' को दीर्घ)
पंचमी	णो, त्तो, ओ, उ, हिंतो ('ओ, उ, हिन्तो' के होने पर दीर्घ)	त्तो ओ, उ, हिंतो/सुंतो (दीर्घादि कार्य अकारान्तवत्)
छट्ठी/चउत्थी	णो, स्स	ण, णं (दीर्घ)
सत्तमी	म्मि, अंसि	सु, सुं (दीर्घ)
संबोहण	लोप (दीर्घ विकल्प से)	प्रथम बहुवचनवत्

विशेष

1. इकारान्त और उकारान्त के शब्दरूपों में अकारान्त के प्रत्ययों से निम्न अन्तर हैं-

   (क) प्रथमा एकवचन में प्रत्यय का लोप तथा अन्तिम-स्वर को दीर्घ।

   (ख) प्रथमा तथा संबोधन के बहुवचन में 'णो, अउ, अओ' होते हैं। 'अउ, अओ' होने पर अंतिम-स्वर का लोप भी होगा। प्रत्यय का लोप होने पर अंतिमस्वर को दीर्घ होगा।

   (ग) तृतीया-एकवचन में 'णा' होगा।

   (घ) चतुर्थी, पंचमी और षष्ठी-एकवचन में अतिरिक्त 'णो' प्रत्यय होगा।

   (ङ) सप्तमी एकवचन में 'ए' के स्थान पर 'अंसि' होगा।

   (च) सम्बोधन के एकवचन में प्रत्यय का लोप तथा शब्द के अंतिम स्वर को विकल्प से दीर्घ। ईकरान्त और ऊकारान्त-शब्दों के स्वर को ह्रस्व होगा।

   (छ) पंचमी के एकवचन और बहुवचन में 'हि' नहीं होता।

2. उकारान्त पुं. शब्दों में 'ई' के स्थान-स्थान पर 'ऊ' होगा, शेष इकारान्त के ही प्रत्यय होंगे। प्रथमा बहुवचन में 'अवो' अतिरिक्त प्रत्यय भी होता है।

3. दीर्घ ईकारान्त और ऊकारान्त के रूप इकरान्त और उकारान्त के समान ही चलते हैं।

मुणि (मुनि)

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
प्र.	मुणि	मुण्णिो (मुणी, मुणओ, मुणउ)
द्वि.	मुणिं	मुणिणो (मुणी)
तृ.	मुणिणा	मुणीहि, -हिं, -हिँ

पं.	मुणित्तो, मुणिणो (मुणीओ, -उ, -हिंतो)	मुणीसुंतो (मुणित्तो, मुणीओ,-उ)
ष./च.	मुणिणो, मुणिस्स	मुणीण, -णं
स.	मुणिम्मि, मुणिंसि	मुणिसु, -सुं
सं.	मुणि (मुणी)	मुणणिो (मुणी, मुणउ, -ओ)

उकारान्त भाणु (भानु)

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्र.	भाणु	भाणुणो (भाणू, भाणउ, ओ, वो)
द्वि.	भाणुं	भाणुणो (साहू)
तृ.	भाणुणा	भाणूहि, -हि, -हिँ
पं.	भाणुणो, भाणुत्तो, भाणूओ, -उ-हिंतो	भाणूहिंतो, -सुंतो, भाणुत्तो, भाणूत्तो (मुणीओ, -उ, -हिंतो)
ष./च.	भाणुणो, भाणुस्स	भाणूण, -णं
स.	भाणुम्मि, भाणुंसि	भाणूसु, -सुं
सं.	भाणु (भाणू)	भाणुणो, भाणू

3.5.3 आकारान्त स्त्री संज्ञाओं में प्रयुक्त चिन्ह

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्र.	लोप	उ, ओ, लोप
द्वि.	म् >अनुस्वार (आ >अ)	,,
तृ.	अ इ, ए	हि, हिं, हिँ
पं.	अ, इ, ए, त्तो, ओ, उ, हिंतो ('त्तो' होने पर 'आ' को ह्रस्व)	त्तो, ओ, उ, हिंतो, सुंतो ('त्तो' होने पर) 'आ' को ह्रस्व)
ष./च.	अ, इ, ए	ण, णं
स.	,,	सु, सुं
सं.	लोप (अ >ए, विकल्प से)	अ, ओ, लोप

माला शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्र.	माला	माला, मालाउ, -ओ
द्वि.	मालं	माला, मालाउ, -ओ

तृ.	मालाअ, -इ, -ए	मालाहि, -हिँ, -हि
प.	मालत्ती, मालाअ, -इ, -ए, ओ, -उ, -हिंतो	मालत्तो, मालाउ, -ओ, -हिंतो, -सुंतो
ष./च.	मालाअ, -इ, -ए	मालाण, -णं
स.	मालाअ, -इ, -ए	मालासु, -सुं
सम्बो.	माले, माला	माला, -उ, -ओ

3.5.4 इकारान्त और उकारान्त स्त्रीलिंग प्रत्यय में अन्तर

इकारान्त और उकारान्त स्त्री. में तृतीया से सप्तमी तक एकवचन में 'आ' अतिरिक्त प्रत्यय होता है तथा अकारान्त पुँ. की तरह दीर्घ-कार्य भी होता है। ईकारान्त प्र. एकवचन, बहुवचन में, द्वि. बहुवचन में तथा सम्बोधन में भी 'आ' अतिरिक्त प्रत्यय जुड़ता है।

इकारान्त 'जुवई' (युवती)

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्र.	जुवई	जुवईओ
द्वि.	जुवई	जुवईओ
तृ.	जुवईए, -इ, -अ, -आ	जुवईहि, -हिं, -हिँ
पं.	जुवईए, -इ, -अ, -आ	जुवईतो, -सुंतो
ष./च.	जुवईए (जुवइत्तो, जुवईओ)	जुवईहि, -णं
स.	जुवईए, -इ, -अ, -आ	जुवईण, -णं
सं.	जुवइ	जुवईओ

उकारान्त 'धेणु' (गाय)

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्र.	धेणु	धेणूओ
द्वि.	धेणुं	धेणूओ
तृ.	धेणुए	धेणूहि
पं.	धेणुए	धेणूहिंतो
ष.	धेणुत्तो	धेणूण
स.	धेणूए	धेणूसु
सं.	धेणु	धेणूओ

3.5.5 नपुंसकलिंग-संज्ञाओं के प्रत्यय

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्र., द्वि.	म् >अनुस्वार	णि, हं, हँ (दीर्घ)

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

सम्बोधन	लोप	''	शेष पुँ. की तरह

3.5.6 शब्दरूपों की प्रमुख-विशेषताएँ

1. द्विवचन का अभाव होने से उसके स्थान पर बहुवचन का प्रयोग होता है।
2. कुछ अपवाद-स्थलों को छोड़कर सर्वत्र चतुर्थी और षष्ठी के रूपों में एकरूपता। चतुर्थी के मूलरूपों का प्राय: अभाव होने से चतुर्थी का लोप भी माना जाता है। अत: चतुर्थी के स्थान पर षष्ठी विभक्ति होती है।
3. ऋकारान्त शब्दों का अभाव है।
4. एकारान्त, ऐकारान्त, ओकारान्त और औकारान्त शब्दों का भी अभाव है।
5. व्यञ्जनान्त-शब्द स्वरान्त बन गये हैं।
6. कहीं कहीं संस्कृत के लिङ्गों में परिवर्तन हो गया है।
7. विभक्तियों में जुड़ने-वाले 'सुप्' प्रत्यय संस्कृत के ही हैं, जिन्हें आदेश के द्वारा नवीन-रूपों में परिवर्तित किया गया है।
8. शब्दरूपों के वैकल्पिक रूपों की बहुलता तथा विभिन्न वचनों एवं विभक्तियों के रूपों में एकरूपता।
9. अकारान्त पु. तथा आकारान्त स्त्री. के विभक्ति-प्रत्ययों की प्रमुखता।
10. सात विभक्तियाँ, तीन लिंग, तीन पुरुष और दो वचन हैं।
11. सम्बोधन में प्रथमा-विभक्ति के ही प्रत्यय जुड़ते हैं। अत: इसे अलग विभक्ति नहीं माना जाना है। किन्तु कुछ शब्दरूपों में अन्तर होता है।

बोधप्रश्न

8. प्राकृत में द्विवचन का अभाव होने से उसके स्थान पर किसका प्रयोग होता है?
9. ऋकारान्त शब्दों का प्रयोग होता है अथवा नहीं?
10. क्रियाओं के मूलरूप को क्या कहते हैं?
11. सप्तमी एक वचन में 'ए' के स्थान पर क्या होगा?
12. प्राकृत में कितने कारक और कितनी विभक्तियां हैं?
13. प्राकृत में धातुओं के कितने काल हैं?
14. प्राकृत-धातुओं में कितने लकार माने गये हैं?
15. पुंलिङ्ग से स्त्रीलिङ्ग बनाना हो, तो प्राकृत में कौन-कौन से प्रत्यय होते हैं?

3.6 धातुरूप

संस्कृतभाषा की तरह प्राकृत में भी धातुरूप चलते हैं, किन्तु यहाँ द्विवचन का प्रयोग नहीं होता है। प्राकृतभाषा के व्याकरण के अनुसार अपने कुछ विशेष धातुरूप के चिन्ह हैं। इन्हें पढ़कर आप स्मरण करें, तभी वाक्य-संरचना में आप दक्ष हो सकेंगे।

3.6.1 धातुरूप के प्रत्यय-चिह्न

वर्तमानकाल के प्रत्यय

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
प्र. पु.	इ, ए	न्ति, न्ते, इरे
म. पु.	सि, से	इत्था, ह
उ. पु.	मि	मो, मु, म

भूतकाल

(क) अकारान्त (संस्कृत में व्यञ्जनान्त) धातुओं में सर्वत्र-ईअ

(ख) अन्य (आकारान्त, एकारान्त एवं ओकारान्त) धातुओं में सर्वत्र-सी, ही, हीअ।

भविष्यत्काल के प्रत्यय

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
प्र. प्र.	हिइ, हिए, स्सइ	हिंति, हिंते हिरे
म. पु.	हिसि, हिसे, स्ससि	हित्था, हिह, स्सह
उ.पु.	हिमि हामि, स्सं, स्सामि	हामो, हामु, हिमो, हिमु, हिम, हाम स्सामो,-मु,-म, हिस्सा, हित्था

विशेष- अकारान्त धातुओं में 'इ' भी जुड़ता है।

विध्यर्थक एवं आज्ञार्थक के प्रत्यय

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
प्र. पु.	उ	न्तु
म. पु.	हि, सु	ह
उ. पु.	मु	मो

नोट- 'सु' के स्थान पर इज्जसु, इज्जहि ओर इज्जे प्रत्यय भी जुड़ते हैं। कहीं-कहीं प्रत्यय का लोप भी होता है।

क्रियातिपत्ति के प्रत्यय

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
प्र. प्र.	ज्ज, ज्जा, न्त, माण	ज्ज, ज्जा, न्त, माण
म. पु.	ज्ज, ज्जा, न्त, माण	ज्ज, ज्जा, न्त, माण
उ.पु.	ज्ज, ज्जा, न्त, माण	ज्ज, ज्जा, न्त, माण

परस्पर संकेतवाले दो वाक्यों का एक संकेत-वाक्य बनने पर सभी वचनों और सभी पुरुषों में- ज्ज, ज्जा, न्त, माण प्रत्ययों का प्रयोग होता है।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

नोट- वर्तमान, भविष्यत्, विधि और आज्ञार्थ में स्वरान्त-धातुओं में प्रत्ययों से पहले तथा सभी प्रत्ययों के स्थान पर विकल्प से 'ज्ज' और 'ज्जा' आदेश भी होते हैं। जैसे- हो (भू) धातु के रूप बनेंगे।

हो धातु (भू-होना)

	एकवचन	**बहुवचन**
प्र.पु.	होइ, होज्जइ, होज्जाई होज्ज, होज्जा	होंति, होज्जंति, होंते, होज्जंते होइरे, होज्जिरे होज्ज, होज्जा
म. पु.	होइ, होज्जइ, होज्जाई होज्ज, होज्जा	होंति, होज्जंति, होंते, होज्जंते होइरे, होज्जिरे होज्ज, होज्जा
उ.पु.	होइ, होज्जइ, होज्जाई होज्ज, होज्जा	होंति, होज्जंति, होंते, होज्जंते होइरे, होज्जिरे होज्ज, होज्जा

3.6.2 धातुरूप

अकारान्त 'हस' (हस्=हँसना)

वर्तमानकाल

	एकवचन	**बहुवचन**
प्र.पु.	हसइ, हसए, हसेइ	हसंति, हसंते, हसिरे, हसेंते
म.पु.	हससि, हससे, हसेसि	हसित्था, हसह, हसेइत्था, हसेह
उ.पु.	हसामि, हसमि, हसेमि	हसिमो, -मु, -म, हसामो, -मु, -म, हसमो, -मु, -म, हसेमो, -मु, -म

भूतकाल

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
प्र. प्र.	हसीअ	हसीअ
म. पु.	हसीअ	हसीअ
उ.पु.	हसीअ	हसीअ

भविष्यत्काल

	एकवचन	**बहुवचन**
प्र.पु.	हसिहिइ, -हिए, हसिसइ	हसिहिंति, -हिंते, -हिरे, 'सस्संति
म.पु.	हसिहिसि, -हिसे, -स्ससि	हसिहित्था, -हिह, -स्सह

उ.पु.	हसिस्सं, -स्सामि, -हामि;	हसिस्सामो, -मु, -म; हसिहामो, -मु, -म;
	हसिहिमि	हसिहिमो, -मु, -म; हसिहिस्सा, -हित्था

विध्यर्थ एवं आज्ञार्थ

	एकवचन	**बहुवचन**
प्र.पु.	हसउ	हसंतु
म.पु.	हसहि, हससु	हसह
	(हसेज्जसु, हसेज्जहि, हसेज्जे, हस)	
उ.पु.	हसामु, हसिमु, हसमु	हसामो, हसिमो, हसमो

नोट- विकल्प से एत्व होने पर सर्वत्र-हसेउ, हसेन्तु आदि रूप भी बनेंगे।

क्रियातिपत्ति

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
प्र. प्र.	हसेज्ज, हसेज्जा, हसन्तो, हसमाणो	हसेज्ज, हसेज्जा, हसंतो, हसमाणो
म. पु.	हसेज्ज, हसेज्जा, हसन्तो, हसमाणो	हसेज्ज, हसेज्जा, हसंतो, हसमाणो
उ.पु.	हसेज्ज, हसेज्जा, हसन्तो, हसमाणो	हसेज्ज, हसेज्जा, हसंतो, हसमाणो

3.6.3 धातु रूप की प्रमुख विशेषताएँ

1. क्रियाओं के मूलरूप को 'धातु' कहते हैं।
2. द्विवचन के स्थान पर बहुवचन का प्रयोग होता है।
3. संस्कृत की तरह तीन पुरुष हैं-प्रथम, मध्यम और उत्तम।
4. व्यञ्जनान्त-धातुओं में 'अ' विकरण जोड़कर उसे स्वरान्त बना दिया है।
5. धातुरूपों में भ्वादिगण का प्राधान्य है तथा अन्य गणों का ह्रास और उनके स्थान पर परस्मैपदी-रूपों का प्राधान्य है।
7. सहायक-क्रिया के साथ कृदन्त-रूपों के प्रयोग का बाहुल्य है।
8. कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य के रूपों में प्रायः एकीकरण हुआ है।
9. सादृश और ध्वनि-विकास के कारण धातुरूपों का सरलीकरण हुआ है।
10. वर्तमानकाल, भूतकाल, भविष्यत्काल, आज्ञार्थक, विध्यर्थक और क्रियातिपत्ति इन छः प्रकारों के रूपों का अस्तित्व है। आज्ञार्थक और विध्यर्थक के रूपों में प्रायः एकरूपता है।
11. भूतकाल और क्रियातिपत्ति में सभी पुरुषों और सभी वचनों में प्रायः एक समान प्रत्यय जुड़ते हैं।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

12. अस् (होना) धातु के वर्तमानकाल, भविष्यकाल, विध्यर्थक और आज्ञार्थक के सभी पुरुषों और सभी वचनों में 'अत्थि' रूप बनता है। भूतकाल के सभी पुरुषों एवं सभी वचनों में 'आसि' और 'अहेसी' रूप बनते हैं। वर्तमानकाल में अन्य रूप भी बनते हैं। जैसे-

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
प्र. पु.	अत्थि	संति, अत्थि
म. पु.	असि, सि, अत्थि	अत्थि
उ. पु.	अम्हि, म्हि, अत्थि, अंसि	म्हो, म्ह, अत्थि, म्हु, मु, मो

13. अकारान्त धातुओं के अतिरिक्त अन्य स्वरान्त धातुओं में विकल्प से 'अ' विकरण जुड़ने के पश्चात् विभक्ति-चिह्न जोड़े जाते हैं, जिससे वहाँ दो-दो रूप बनते हैं। जैसे- ध्यै >झा+अ= झाअ+झ= झाअइ (झा+इ =झाइ), पा+अ =पाअ+अ =पाअइ (पा+इ = पाइ) ।

14. कुछ धातुओं के अन्त्य-व्यञ्जन को द्वित्व होने से वहाँ कहीं-कहीं दो-दो रूप बनते हैं। जैसे- चलइ चल्लइ (चलति), निमीलइ, निमिल्लइ (निमीलति)। अन्यत्र- तुट्टइ (त्रुटति), सक्कइ (शक्नोति), कुप्पइ (कुप्यति)।

3.7 सारांश

भाषा को जानने के लिए वर्णमाला का ज्ञान जरूरी है। प्राकृत-भाषा के जो शब्द और रूप संस्कृत के बिल्कुल समान हैं, उन्हें 'तत्सम' कहते हैं। जिनमें ध्वनि-परिवर्तन हुआ है उन्हें 'तद्भव' कहा जाता है। जिनका सम्बन्ध अन्य भाषाओं से अर्थात् क्षेत्रीय भाषाओं से सम्बन्ध है, उन्हें 'देश्य' शब्द कहा जाता है। ध्वनि सम्बन्धी परिवर्तन उच्चारण में सरलता के लिए होता है। ध्वनि-परिवर्तन स्वर और व्यञ्जनों का होता है। इसे **स्वर-विकार** और **व्यञ्जन-विकार** के रुप में जाना जाता है। स्वर विकार के अर्न्तगत मात्रात्मक परिवर्तन, गुणात्मक परिवर्तन, प्रारम्भिक स्वर लोप और अर्धस्वर य् और व् का परिवर्तन का विधान बताया गया है। व्यञ्जन-विकार में असंयुक्त, प्रारम्भिक और मध्यवर्ती, अंतिमवर्ती व्यंजन, घोषीकरण, मूर्धन्यीकरण और घोषीकरण, द्वित्वकरण, वर्ण-लोप और वर्ण व्यत्यय होता है। अन्तिम व्यञ्जन में लोप, एवं आगम होता है। संयुक्त व्यञ्जन में भी ध्वनि-परिवर्तन होता है। अनुस्वार में परिवर्तन, स्वर-भक्ति के अतिरिक्त व्यंजनों में अपवाद के रूप में कुछ अन्य परिवर्तन होते हैं।

प्राकृतभाषा को जानने के लिए शब्दरूप एवं धातुरूप की अहम् भूमिका है। शब्दरूपों में द्विवचन का अभाव होने से उसके स्थान पर बहुवचन का प्रयोग होता है। शब्द रूपों के वैकल्पिक रूपों की बहुलता तथा विभिन्न वचनों एवं विभक्तियों के रूपों में एकरूपता होती है। इसमें सात विभक्तियाँ, तीन लिंग, तीन पुरुष और दो वचन होते हैं।

क्रियाओं के मूलरूप को धातु कहते हैं। संस्कृत की तरह प्राकृत में तीन पुरुष है- प्रथम, मध्यम और उत्तम। कर्तृवाच्य एवं कर्मवाच्य में प्राय: एकीकरण हुआ है। अस् (होना) धातु के वर्तमानकाल, भविष्यकाल, विध्यर्थक और आज्ञार्थक के सभी पुरुषों और सभी वचनों में 'अत्थि' रूप बनता है। साथ में अन्यरूप भी बनते हैं। भूतकाल के सभी पुरुषों एवं सभी वचनों में 'असि' और 'अहेसी' रूप बनते हैं। इसप्रकार वाक्यरचना करने में शब्दरूप और धातुरूप का ज्ञान सहायक होता है।

3.8 शब्दावली

1. विट्टी – पुत्री।
2. कोट्ट – दुर्ग।
3. चंग – रम्य।
4. डाल – शाखा।
5. लडह – रम्य।
6. वसभ – वृषभ।
7. वारिस – वर्ष।
8. सेज्ज – शय्या।
9. पुण्ण – पूर्ण।
10. ओसर – अवसर।
11. सउण – सकुन।
12. पडिहार – प्रतिहार।
13. जग – जगत्।
14. दुवार – द्वार।
15. सीस – शिष्य।
16. अच्छरा – अप्सरा।
17. देवम्मि – देव शब्द, सप्तमी विभक्ति एकवचन।
18. देवस्स – देव शब्द, षष्ठी विभक्ति एकवचन।
19. अत्थि – अस धातु, प्रथम पुरुष एकवचन। ,
20. हसइ – हस धातु, प्रथम पुरुष एकवचन।
21. हसीअ – हस धातु, भूतकाल।
22. हसउ – हस धातु, विध्यिर्थक प्रथम पुरुष एकवचन।

3.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. प्राकृत दीपिका – डॉ. सुदर्शन लाल जैन, पार्श्वनाथ विद्यपीठ, वाराणसी।
2. प्राकृत मार्गोपदेशिका– बेचरदास दोसी, उत्तरप्रदेश जैन संस्कृति संस्थान लखनऊ।
3. प्राकृत स्वयंशिक्षक – प्रो. प्रेमसुमन जैन, प्राकृतभारती अकादमी, जयपुर।

3.10 सहायक ग्रन्थ

1. प्राकृत प्रवेशिका – डॉ. कोमलचन्द्र जैन, तारा प्रकाश, वाराणसी।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

2. प्राकृत प्रकाश – वररुचि, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।

3. सरल प्राकृत व्याकरण – डॉ. राजाराम जैन, प्राच्य भारती प्रकाश, आरा (बिहार)।

4. प्राकृत विमर्श – डॉ. सरयू प्रसाद अग्रवाल, भारती विद्या प्रकाशन, वाराणसी।

5. प्राकृत व्याकरण प्रवेशिका – प्रो. सत्यरंजन बनर्जी, एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता।

6. अभिनव प्राकृत व्याकरण – डॉ. नेमिचन्द्र जैन, तारा प्रकाशन, वाराणसी।

3.11 बोध-प्रश्नों के उत्तर

1. प्राकृत में अ, इ, उ, ऍ, ओ- ह्रस्व-स्वरों का प्रयोग होता है।
2. प्राकृत में आ, ई, ऊ, ए, ओ- इन दीर्घ-स्वरों का प्रयाग होता है।
3. य्, र्, ल्, व् – ये अन्तस्थ वर्ण हैं।
4. प्राकृतभाषा में विसर्ग (:) का प्रयोग नहीं होता है ।
5. कभी-कभी स्वर का स्थान-परिवर्तन भी पाया जाता है, जैसे – मुणिस=मनुष्य।
6. व्यञ्जन-ध्वनि-परिवर्तन दो प्रकार के होते हैं:-
   1. असंयुक्त-ध्वनि परिवर्तन
   2. संयुक्त-ध्वनि परिवर्तन
7. कभी-कभी संयुक्त-व्यञ्जन के बीच में स्वर का आगमन होता है उसे स्वरभक्ति कहते हैं। जैसे- रयण (रत्न) गरहा (गर्हा)।
8. प्राकृतभाषा में द्विवचन का अभाव होने से उसके स्थान पर बहुवचन का प्रयोग होता है।
9. प्राकृत में ऋकारान्त-शब्दों का सर्वथा अभाव है।
10. क्रियाओं के मूलरूप को धातु कहते हैं।
11. सप्तमी एकवचन में 'ए' के स्थान पर 'असि' होता है।
12. प्राकृत में छः कारक और छः विभक्तियाँ हैं। सम्प्रदान-कारक और सम्बन्ध-कारक को एक माना गया है। चतुर्थी-विभक्ति के स्थान में षष्ठी-विभक्ति होती है।
13. प्राकृत में धातुओं के तीन काल हैं– भूत, वर्तमान और भविष्यत्।
14. प्राकृत में लकार चार हैं– लट् (वर्तमान), लङ् (भूतकाल), लृट् (भविष्यत्) और लोट् (आज्ञा आदि अर्थ)।
15. पुलिङ्ग से स्त्रीलिङ्ग बनाना हो तो प्राकृत में प्रमुखतः आ, ई और ऊ –ये तीन प्रत्यय हैं। जैसे– बाला, बंभणी, अज्जू आदि।

3.12 अभ्यास प्रश्न

1. प्राकृत वर्ण-समाम्नाय की महत्ता प्रतिपादित करें।

.....

.....

.....

.....

2. संयुक्त व्यंजन-परिवर्तन को सोदाहरण स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

3. प्राकृत भाषा और व्याकरण पर एक निबंध लिखें।

.....

.....

.....

.....

4. ध्वनि-परिवर्तन के नियमों को लिखकर अभ्यास करें।

.....

.....

.....

.....

5. तद्भव, तत्सम और देशी शब्दों पर विवेचनात्मक टिप्पणी लिखें।

.....

.....

.....

.....

6. धातुरूप की प्रमुख-विशेषताएँ लिखें।

.....

.....

.....

.....

7. प्राकृत में कारक का स्वरूप स्पष्ट करें।

.....

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

.....

.....

.....

8. प्राकृत–धातुरूप संस्कृत से किसप्रकार भिन्न हैं?

.....

.....

.....

.....

9. प्राकृत शब्दरूपों की विशेषताएँ लिखें।

.....

.....

.....

.....

10. प्राकृत के शब्दरूप और धातुरूप में क्या अन्तर है?

.....

.....

.....

.....

—◆—

पञ्चम पाठ (Unit-V)

5. प्राकृत वाक्य रचना एवं अनुवाद

पाठ संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 विविध अनुवाद पाठ्य-सामग्री
5.3.1 अनुवाद-प्रयोग (1)
5.3.2 अनुवाद-प्रयोग (2)
5.3.3 अनुवाद-प्रयोग (3)
5.3.4 अनुवाद-प्रयोग (4)
5.3.5 अनुवाद-प्रयोग (5)
बोध प्रश्न
5.3.6 अनुवाद-प्रयोग (6)
5.3.7 अनुवाद-प्रयोग (7)
5.3.8 अनुवाद-प्रयोग (8)
5.3.9 अनुवाद-प्रयोग (9)
5.3.10 अनुवाद-प्रयोग (10)
बोधप्रश्न
5.4 सारांश
5.5 शब्दावली
5.6 सन्दर्भ-ग्रन्थ
5.7 सहायक-ग्रन्थ
5.8 बोध-प्रश्न के उत्तर
5.9 अभ्यास-प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

किसी भी भाषा को सीखने के लिए वाक्यरचना का ज्ञान आवश्यक होता है यहाँ पर प्राकृतभाषा को सीखने के लिए अनुवाद के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं। अनुवाद ही किसी भाषा को सुदृढ़ बनाता है।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत-पाठ के अध्ययन से आपको -

- प्राकृत में वाक्यों का निर्माण-कौशल का ज्ञान हो सकेगा।
- विविध नवीन-शब्दावली से परिचय प्राप्त हो सकेगा।
- प्राकृत से हिन्दी तथा हिन्दी से प्राकृत मे अनुवाद करने की क्षमता विकसित हो सकेगी।
- प्राकृत वाक्य-रचना और अनुवाद करने में सहायता मिलेगी।

5.3 विविध अनुवाद पाठ्य-सामग्री

यहाँ पर तीनों कालों, तीनों पुरुषों तथा दोनों वचनों के अनुवाद के उदाहरण दिये गये

हैं। इनका अभ्यास करके आप प्राकृत के अनुवाद में दक्ष हो सकेंगे।

5.3.1 अनुवाद-प्रयोग (1)

अहं णमामि। = मैं प्रणाम करता हूँ।

अहं इच्छामि। = मैं इच्छा करता हूँ।

अहं पिबामि। = मै पीता हूँ।

अहं गच्छामि। = मैं जाता हूँ।

अहं खेलामि। = मै खेलता हूँ।

अहं हसामि। = मैं हँसता हूँ।

अहं सयामि। = मैं सोता हूँ।

अहं पढामि। = मैं पढ़ता हूँ।

अहं लिहामि। = मैं लिखता हूँ।

अहं भुंजामि। = मैं भोजन करता हूँ।

5.3.2 अनुवाद-प्रयोग (2)

अम्हे णमामो। = हम प्रणाम करते हैं।

अम्हे इच्छामो। = हम इच्छा करते हैं।

अम्हे पिबामो। = हम पीते हैं।

अम्हे गच्छामो। = हम जाते हैं।

अम्हे खेलामो। = हम खेलते हैं।

अम्हे हसामो। = हम हँसते हैं।

अम्हे सयामो। = हम सोते हैं।

5.3.3 अनुवाद-प्रयोग (3)

अम्हे अत्थ णच्चमो। = हम यहाँ नृत्य करते हैं।

अम्हे तत्थ भमामो। = हम वहाँ भ्रमण करते हैं।

अम्हे सइ भुंजामो। = हम एक बार भोजन करते हैं।

अम्हे मुहु चिंतामो। = हम बार-बार चिंता करते हैं।

अम्हे सदा सेवामो। = हम सदा सेवा करते हैं।

अम्हे दाणिं सयामो। = हम इस समय सोते हैं।

अम्हे सणिअं चलामो। = हम धीरे चलते हैं।

अम्हे झत्ति गच्छामो। = हम शीघ्र जाते हैं।

अम्हे अग्गओ पासामो। = हम आगे देखते हैं।

अम्हे ण लिहामो। = हम नहीं लिखते हैं।

5.3.4 अनुवाद-प्रयोग (4)

तुमं णमसि। = तुम नमन करते हो।

तुमं जाणासि। = तुम जानते हो।

तुमं इच्छसि। = तुम इच्छा करते हो।

तुमं पिबसि। = तुम पीते हो।

तुमं सयसि। = तुम सोते हो।

तुमं लिहसि। = तुम लिखते हो।

तुमं भमसि। = तुम घूमते हो।

तुमं भुंजसि। = तुम भोजन करते हो।

तुमं सेवसि। = तुम सेवा करती हो।

तुमं भुंजसि। = तुम भोजन करते हो।

5.3.5 अनुवाद-प्रयोग (5)

तुम्हे णमित्था। = तुम दोनों नमन करते हो।

तुम्हे जाणित्था। = तुम सब जानते हो।

तुम्हे सुणित्था। = तुम सब सुनते हो।

तुम्हे चलित्था। = तुम सब चलते हो।

तुम्हे भुंजित्था। = तुम सब भोजन करते हो।

तुम्हे सेवित्था। = तुम सब सेवा करती हो।

तुम्हे भमित्था। = तुम सब घूमती हो।

तुम्हे चिंतित्था। = तुम सब चिंतन करती हो।

तुम्हे गच्छित्था। = तुम सब जाते हो।

तुम्हे पासित्था। = तुम सब देखते हो।

बोधप्रश्न

1. मै खेलता हूँ - इसका प्राकृत में अनुवाद करें।
2. अम्हे तत्थ भमामो - इसका हिन्दी में अनुवाद करें।
3. हम दोनों नमन करते हैं - इसका प्राकृत में अनुवाद करें।
4. सो कज्जं करीअ - इसका हिन्दी में अनुवाद करें।
5. तुम सब जानते हो - इसका प्राकृत में अनुवाद करें।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

5.3.6 अनुवाद-प्रयोग (6)

अहं तत्थ गच्छीअ।	=	मैं वहाँ गया।
तुमं दव्वं इच्छीअ।	=	तुमने धन को चाहा।
ते रोटिअं भुजीअ।	=	उन्होंने रोटी खायी।
सो कज्जं करीअ	=	उसने कार्य किया।
अहं कल्ल गीअं गाही।	=	मैनें कल गीत गाया।
तत्थ किं होही।	=	वहाँ क्या हुआ?
अहं अत्थ अम्हि।	=	मैं यहाँ हूँ।
सो कत्थ अत्थि।	=	वह कहाँ है।
ते कल्ल तत्थ अहेसि।	=	वे सब कल वहाँ थे।
ते अत्थ संति।	=	वे यहाँ हैं।

5.3.7 अनुवाद-प्रयोग (7)

अहं विज्जालयं गच्छिहिमि।	=	मैं विद्यालय जाऊँगा।
तुम दव्वं इच्छिहिसि।	=	तुम द्रव्य की इच्छा करोगे।
सो तत्थ कंदुअं खेलिहिइ।	=	वह वहाँ गेंद खेलेगा।
अम्हे अवस्स पोत्थअं पढिहामो।	=	हम अवश्य पुस्तक पढेंगे।
ते तत्थ किं भुंजिहिंति।	=	वे वहाँ क्या खायेंगे।
अम्हे वागरणं पुच्छिहामो।	=	हम व्याकरण पूछेंगे।

5.3.8 अनुवाद-प्रयोग (8)

अहं विज्जालयं गच्छमु।	=	मैं विद्यालय जाऊँ।
तुमं दव्वं इच्छहि।	=	तुम धन को चाहो।
ते तत्थ भुंजंतु।	=	वे वहाँ भोजन करें।
सा पत्तं लिहउ।	=	वह पत्र लिखे।
ते वागरणं पुच्छंतु।	=	वे व्याकरण पूछें।

5.3.9 अनुवाद-प्रयोग (9)

सो चित्तं पासिऊण लिहइ।	=	वह चित्र को देखकर लिखता है।
तुमं विज्जालयं गच्छिऊण पढसि।	=	तुम विद्यालय जाकर पढते हो।
सो धाविऊण नमीअ।	=	वह दौड़कर नमन करता है।
अम्हे पढिऊण खेलामो।	=	हम सब पढ़कर खेलते हैं।
अहं पढिउं विज्जालयं गच्छामि।	=	मैं पढने के लिए विद्यालय जाता हूँ।

तुमं खेलिउं तत्थ गच्छीह। = तुम खेलने के लिए वहाँ गये।

ते धणं दाउं इच्छंति। = वे धन के लिए इच्छा करते हैं।

अम्हे लिहिउं पढीअ। = हम सबने लिखने के लिए पढ़ा।

स गाउं पुच्छइ। = वह गाने के लिए पूछती है।

सो दुहं पाउं इच्छइ। = वह दूध पीने के लिए इच्छा करता है।

5.3.10 अनुवाद-प्रयोग (10)

माआ बालं इच्छइ। = माता बालिका को चाहती है।

धूआ माअं णमइ। = पुत्री माता को नमन करती है।

सा सुण्हं जाणइ। = वह बहू को जानती है।

इत्थी मालं धारइ। = स्त्री माला को धारण करती है।

भूवई जुवइं पासइ। = राजा युवती को देखता है।

बोधप्रश्न

6. वह वहाँ गेद खेलेगा। – इसका प्राकृत में अनुवाद करें।
7. ते तत्थ भुंजंतु। – इसका हिन्दी में अनुवाद करें।
8. मैं वहाँ गया। – इसका प्राकृत में अनुवाद करें।
9. तत्थ किं होही। – इसका हिन्दी में अनुवाद करें।
10. हम अवश्य पुस्तक पढेंगे – इसका प्राकृत में अनुवाद करें।

5.4 सारांश

प्रस्तुत पाठ में सर्वनाम-शब्दों के विविधरूपों का प्रयोग, प्राकृत वाक्य-रचना एवं अनुवाद को बताया गया है। इसमें अनेक शब्दरूपों के अलग- विभक्ति एवं वचनों द्वारा इनके सभी रूपों को समझाया गया है। कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य, वर्तमान, भूत, भविष्यत, विधि एवं क्रियातिपत्ति के विविधरूपों का भी इस पाठ में प्रयोग किया गया है।

5.5 शब्दावली

1. खेलामि – 'खेल' धातु वर्तमानकाल उ. पु. एकवचन।
2. सयामि – 'सय' धातु वर्तमानकाल उ. पु. एकवचन।
3. तत्थ – वहाँ।
4. अग्गओ – 'अग्ग' शब्द प्रथमा विभक्ति एकवचन।
5. वागरण – व्याकरण।
6. माअ – मा शब्द भूतकाल सभी विभक्ति एवं वचनों में एक रूप।

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

5.6 संदर्भ-ग्रन्थ

1. प्राकृत-मार्गोपदेशिका- बेचरदास दोसी, उत्तरप्रदेश जैन संस्कृति संस्थान, लखनऊ।
2. प्राकृत-व्याकरण - राजाराम जैन, महाजन टोली, आरा।

5.7 सहायक-ग्रन्थ

1. प्राकृत रचनोदय- उदयचन्द जैन, न्यू बुक कारपोरेशन, दिल्ली।
2. प्राकृत प्रवेशिका- डॉ. कोमलचन्द्र जैन, तारा बुक एजेन्सी, वाराणसी।
3. प्राकृत दीपिका- डॉ. सुदर्शनलाल जैन, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी।
4. प्राकृत विमर्श- डॉ. सरयू प्रसाद अग्रवाल, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी।
5. प्राकृत व्याकरण प्रवेशिका- प्रो. सत्यरंजन बनर्जी, एशियाटिक सोसायटी, कोलकाता।
6. प्राकृत स्वयं शिक्षक- प्रो. प्रेम सुमन जैन, प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर।

5.8 बोधप्रश्न के उत्तर

1. अहं खेलामि।
2. हम वहाँ भ्रमण करते हैं।
3. अम्हे णमामो।
4. उसने कार्य किया।
5. तुमं जाणसि।
6. सो तत्थं कंदुअं खेलिहिइ।
7. वे वहाँ भोजन करें।
8. अहं तत्थ गच्छीअ।
9. वहाँ क्या हुआ।
10. अम्हे पोत्थअं पढिहामो।

5.9 अभ्यास प्रश्न

1. प्राकृत से हिन्दी-अनुवाद में क्या कठिनाई होती है?

.....

.....

.....

.....

2. प्राकृत-अनुवाद के नियम लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3. प्राकृत-अनुवाद की विशेषताएँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

© राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली, २०१४

प्रायोगिक प्रश्न (Assignments)

३० अंक

इस पाठ्यक्रम में 30 अंकों का एक प्रायोगिक (Assignment) कार्य रखा गया है। निम्नोक्त विषयों में से किसी एक पर विवेचनात्मक विस्तृत-निबन्ध अध्येता से लिखने की अपेक्षा है। उससे सम्बन्धित-ग्रन्थों का निर्देश भी किया गया है।

- प्राकृत-साहित्य में वर्णित धार्मिक-शिक्षा

अथवा

- संस्कृत-नाटकों में प्रयुक्त प्राकृतों का विवेचन

अथवा

- प्राकृत-साहित्य का अन्य-साहित्यों पर प्रभाव

अथवा

- वर्तमान समय में प्राकृत और जैन-परम्परा का विकास

सहायक ग्रन्थ निर्देश -

१. मृच्छकटिकं - जयन्ती टीका, सं. मदन गोपाल वाजपेयी, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी।

२. जैन साहित्य में भारतीय समाज - डॉ. जगदीशचन्द्र जैन, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

३. जैन धर्म, दर्शन और संस्कृति - डॉ. सागरमल जैन, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी।

४. यशस्तिलक का सांस्कृतिक अध्ययन - डॉ. गोकुलचन्द्र जैन, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी।

५. प्राकृत शब्द-महार्णव - डॉ. हरगोविन्द टी. सेठ, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, वाराणसी।